सिविल सेवा परीक्षा...

संस्कृति IAS

सामान्य अध्ययन

आधुनिक भारत का इतिहास

भाग-1

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम

636, भू-तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

9555-124-124 sanskritiiasedu@gmail.com

प्रिय विद्यार्थी,

सबसे पहले संस्कृति IAS के 'दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम' का हिस्सा बनने पर आपको बहुत बधाई।

सिविल सेवा परीक्षा, जिसे आई.ए.एस. परीक्षा के नाम से जाना जाता है; यह देश की प्रतिष्ठित लोक सेवाओं में चयन के लिये आयोजित होने वाली सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतियोगी परीक्षा है। आज देश में युवाओं की एक बड़ी संख्या है जो सिविल सेवाओं में जाकर राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान देना चाहते हैं। परंतु, गंभीरतापूर्वक इस परीक्षा की तैयारी करना हर किसी के लिये संभव नहीं हो पाता। इसकी एक बड़ी वजह यह है कि इस परीक्षा की तैयारी के लिये दिल्ली, प्रयागराज या लखनऊ जैसे शहरों में रहना किसी भी निम्न-मध्यम वर्गीय पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थी के लिये संभवप्राय नहीं होता; दूसरा, एक बड़ी संख्या ऐसे विद्यार्थियों की भी है जो पहले से नौकरी कर रहे हैं। इन विद्यार्थियों के लिये मुख्य समस्या समय की होती है क्योंकि कोचिंग संस्थान में जाकर तैयारी करने में डेढ़-दो वर्ष का समय लगता है, जबकि नौकरी से इतनी लंबी छुट्टी मिलनी प्राय संभव नहीं होती।

ऐसे ही विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए संस्कृति IAS ने 'दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम' की शुरुआत की है।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत, कम फीस में विद्यार्थियों को किसी भी कोर्स की पूरी पाठ्य सामग्री उनके घर पर भेजी जाती है। यह पाठ्य सामग्री सिविल सेवा परीक्षा के पाठ्यक्रम के अनुरूप होती है। अगर कोई विद्यार्थी गंभीरता से इस पाठ्य सामग्री का अध्ययन करता है तो उसकी इतनी तैयारी निश्चित रूप से हो जाएगी कि वह सिविल सेवा परीक्षा को पास कर सके।

हालाँकि, किसी भी विद्यार्थी के दिमाग में यह संशय उत्पन्न होना स्वभाविक है कि अगर इस पाठ्य सामग्री को पढ़कर यह परीक्षा पास हो सकती है तो फिर कोचिंग संस्थान में पढ़ाई करने की क्या आवश्यकता है? अत: यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत आपको सिर्फ संपूर्ण पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराई जाएगी। क्लासरूम प्रोग्राम में पाठ्य सामग्री के अतिरिक्त विद्यार्थी की तैयारी को प्रभावी बनाने के लिये कई तरह के कार्यक्रम चलाए जाते हैं, जैसे नियमित कक्षा, क्लास टेस्ट, टेस्ट सीरीज़, शंका निवारण सत्र, नियमित रूप से अध्यापक से मिलकर तैयारी को बेहतर बनाने की सुविधा इत्यादि।

अत: 'दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम' को क्लासरूम प्रोग्राम का विकल्प नहीं कहा जा सकता है। यद्यपि, ऐसे विद्यार्थी जो किसी कारणवश दिल्ली या प्रयागराज जैसे शहरों में जाकर सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी नहीं कर सकते हैं, ऐसे विद्यार्थियों के लिये 'दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम' अपनी प्रकृति में निश्चित रूप से एक श्रेष्ठ विकल्प है।

विधिक घोषणाएँ

- इस पुस्तक में प्रकाशित सूचनाएँ, समाचार, ज्ञान एवं तथ्य पूरी तरह से सत्यापित किये गए हैं। फिर भी, यदि कोई जानकारी या तथ्य गलत प्रकाशित हो गया हो तो प्रकाशक, संपादक या मुद्रक, उससे किसी व्यक्ति विशेष या संस्था को पहुँची क्षति के लिये ज़िम्मेदार नहीं है।
- हम विश्वास करते हैं कि इस पुस्तक में छपी सामग्री लेखकों द्वारा मौलिक रूप से लिखी गई है। अगर कॉपीराइट उल्लंघन का कोई मामला सामने आता है तो प्रकाशक को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जाएगा।
- सभी विवादों का निपटारा दिल्ली न्यायिक क्षेत्र में होगा।
- © कॉपीराइट: संस्कृति पब्लिकेशन्स, सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का प्रकाशन अथवा उपयोग, प्रतिलिपीकरण, ऐसे यंत्र में भंडारण जिससे इसे पुन: प्राप्त किया जा सकता हो या स्थानांतरण, किसी भी रूप में या किसी भी विधि से (इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या किसी अन्य प्रकार से) प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना नहीं किया जा सकता।

विषय-सूची

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
1	भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन	1-10
2	बंगाल एवं मैसूर विजय	12-17
3	मराठों पर नियंत्रण	18-22
4	सिंध, पंजाब एवं अवध विजय	23-36
5	ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (क)	37-47
	ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (ख)	48-60
	ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (ग)	61-72
6	ब्रिटिश प्रशासनिक नीति (क)	73-81
	ब्रिटिश प्रशासनिक नीति (ख)	82-96
7	ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ	97-124
8	भारतीय प्रतिक्रिया (अ)	125-153
	भारतीय प्रतिक्रिया (ब)	154-176
9	सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन	177-205

❑❑❑❑❑

विस्तृत अनुक्रम

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
1	**भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन**	**1-10**
	• भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन ➤ पुर्तगालियों का भारत आगमन ➤ डचों का भारत आगमन ➤ अंग्रेज़ों का भारत आगमन ➤ भारत में फ्राँसीसी शक्ति का आगमन ➤ आँग्ल-फ्राँसीसी संघर्ष ➤ प्रथम कर्नाटक युद्ध ➤ द्वितीय कर्नाटक युद्ध ➤ तृतीय कर्नाटक युद्ध ➤ फ्राँसीसियों की पराजय के कारण • भारत में ब्रिटिश विजय ➤ ब्रिटिश विजय: संयोगवश या उद्देश्यपूर्ण ➤ यूरोपीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण ➤ क्षेत्रीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण	
2	**बंगाल एवं मैसूर विजय**	**11-17**
	• अंग्रेज़ों की बंगाल विजय ➤ प्लासी का युद्ध ➤ प्लासी के युद्ध के बाद का घटनाक्रम ➤ बक्सर का युद्ध • अंग्रेज़ों की मैसूर विजय ➤ प्रथम आँग्ल-मैसूर युद्ध ➤ द्वितीय आँग्ल-मैसूर युद्ध ➤ तृतीय आँग्ल-मैसूर युद्ध ➤ चतुर्थ आँग्ल-मैसूर युद्ध	
3	**मराठों पर नियंत्रण**	**18-22**
	• आँग्ल-मराठा संघर्ष ➤ प्रथम आँग्ल-मराठा युद्ध ➤ द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध ➤ तृतीय आँग्ल-मराठा युद्ध • मराठों की असफलता के कारण ➤ आपसी गुटबंदी और असंगठित मराठा संघ ➤ मराठों की युद्ध नीति ➤ योग्य नेतृत्व का अभाव ➤ अंग्रेज़ों की उत्तम कूटनीति	
4	**सिंध, पंजाब एवं अवध विजय**	**23-36**
	• सिंध विजय • पंजाब विजय ➤ रणजीत सिंह ➤ प्रथम आँग्ल-सिख युद्ध ➤ द्वितीय आँग्ल-सिख युद्ध • अवध • सहायक संधि प्रणाली • व्यपगत सिद्धांत/विलय नीति	

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
7	**ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ**	**97-124**
	• पृष्ठभूमि ➤ प्रथम चरण, 1772-1813 ई. ➤ द्वितीय चरण, 1813-1857 ई. ➤ तृतीय चरण, 1857-1885 ई. ➤ चतुर्थ चरण, 1885 ई. के बाद • ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों का प्रभाव • शिक्षा नीति ➤ पृष्ठभूमि ➤ भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रसार के कारण ➤ ईसाई मिशनरियों के आरंभिक प्रयास ➤ प्राच्यवादी तथा पाश्चात्यवादी विवाद ➤ मैकाले का स्मरण-पत्र ➤ वुड का घोषणा पत्र, 1854 ई. ➤ हंटर शिक्षा आयोग, 1882-83 ई. ➤ भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 1904 ई. ➤ शिक्षा नीति पर सरकारी प्रस्ताव, 1913 ई. ➤ सैडलर विश्वविद्यालय आयोग, 1917-19 ई. ➤ हार्टोग समिति, 1929 ई. ➤ वर्धा मूल शिक्षा योजना, 1937 ई. ➤ सार्जेंट योजना, 1944 ई. ➤ राधाकृष्णन आयोग, 1948-49 ई. ➤ कोठारी शिक्षा आयोग, 1964-66 ई.	➤ राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 ई. ➤ पाश्चात्य शिक्षा का भारत पर प्रभाव ➤ ब्रिटिशकालीन शिक्षा एवं राष्ट्रवाद का उदय • भारत में प्रेस का विकास ➤ पृष्ठभूमि ➤ समाचार-पत्रों का विकास ➤ प्रेस से संबंधित अधिनियम ➤ प्रेस नियंत्रण अधिनियम ➤ द लाइसेंसिंग रेगुलेशन एक्ट ➤ लिबरेशन ऑफ द इंडियन प्रेस एक्ट (मेटकॉफ अधिनियम), 1835 ➤ 1857 ई. का अनुज्ञप्ति अधिनियम ➤ पंजीकरण अधिनियम, 1867 ➤ वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट, 1878 ➤ आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1898 ➤ समाचार-पत्र अधिनियम, 1908 ➤ भारतीय प्रेस अधिनियम,1910 ➤ भारतीय प्रेस (संकटकालीन शक्तियाँ) अधिनियम, 1931 ➤ समाचार-पत्र जाँच समिति, 1947 ➤ प्रेस आयोग ➤ समाचार-पत्रों की भूमिका एवं प्रभाव	
8	**भारतीय प्रतिक्रिया (अ)**	**125-153**
	जनजातीय विद्रोह • पृष्ठभूमि • जनजातीय विद्रोह के प्रमुख कारण • प्रमुख जनजातीय विद्रोह • जनजातीय विद्रोह का स्वरूप • जनजातीय विद्रोह की सीमाएँ **कृषक विद्रोह** • पृष्ठभूमि	• कृषक विद्रोह के प्रमुख कारण • कृषक विद्रोह के विभिन्न चरण • कृषक आंदोलनों का स्वरूप ➤ 19वीं सदी के कृषक विद्रोह का स्वरूप ➤ 20वीं सदी के किसान आंदोलनों का स्वरूप • किसान आंदोलनों की उपलब्धियाँ	

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
8	**भारतीय प्रतिक्रिया (ब)**	**154-176**
	1857 ई. का विद्रोह • पृष्ठभूमि • विद्रोह के कारण • विद्रोह का स्वरूप • विद्रोह का आरंभ एवं प्रसार • विद्रोह के प्रमुख केंद्र • विद्रोह का परिणाम एवं प्रभाव • विद्रोह की विफलता के कारण **श्रमिक संघ आंदोलन** • पृष्ठभूमि • श्रमिक संघों के गठन के कारण • भारत में श्रमिक आंदोलन का आरंभ एवं विकास • 19वीं सदी में श्रमिक आंदोलन • 19वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान • 20वीं सदी में श्रमिक आंदोलन ➤ एटक (AITUC) की स्थापना ➤ मेरठ षड्यंत्र केस • 20वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान	
9	**सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन**	**177-205**
	• पृष्ठभूमि • सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण • सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों का स्वरूप • समाज सुधारकों द्वारा अपनाए गए प्रमुख साधन • सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन का योगदान • सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन की सीमाएँ • 19वीं सदी के प्रमुख सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन • स्वामी विवेकानंद एवं रामकृष्ण मिशन • थियोसोफिकल सोसायटी • मुस्लिम धर्म सुधार आंदोलन • सिख सुधार आंदोलन • जाति सुधार आंदोलन • अन्य प्रमुख आंदोलन • समाज सुधार के केंद्र में महिलाएँ • सामाजिक-धार्मिक सुधारों के प्रति कॉन्ग्रेस का दृष्टिकोण	

❑❑❑❑❑

इकाई

1

भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन (Arrival of European Companies in India)

- भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन
  - ➤ पुर्तगालियों का भारत आगमन
  - ➤ डचों का भारत आगमन
  - ➤ अंग्रेज़ों का भारत आगमन
  - ➤ भारत में फ्राँसीसी शक्ति का आगमन
  - ➤ आँग्ल-फ्राँसीसी संघर्ष
    - ■ प्रथम कर्नाटक युद्ध
    - ■ द्वितीय कर्नाटक युद्ध
    - ■ तृतीय कर्नाटक युद्ध
  - ➤ फ्राँसीसियों की पराजय के कारण
- भारत में ब्रिटिश विजय
  - ➤ ब्रिटिश विजय: संयोगवश या उद्देश्यपूर्ण
  - ➤ यूरोपीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण
  - ➤ क्षेत्रीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण

भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन (Arrival of European Companies in India)

पुर्तगालियों का भारत आगमन (Arrival of the Portuguese in India)

- यूरोपीय शक्तियों में सबसे पहले पुर्तगालियों ने भारत में प्रवेश किया। नए समुद्री मार्ग की खोज करते हुए वास्कोडिगामा 1498 ई. में केप ऑफ गुड होप से होकर भारत के पश्चिमी तट पर अवस्थित कालीकट बंदरगाह पहुँचा, जहाँ कालीकट के तत्कालीन शासक जमोरिन ने उसका स्वागत किया।
- वास्कोडिगामा के भारत आगमन से पूर्व 1487 ई. में 'बार्थोलाम्यो डियाज़' नामक पुर्तगाली अफ्रीका के दक्षिणी सिरे तक पहुँचा तथा इस स्थान को 'केप ऑफ गुड होप' नाम प्रदान किया।
- 1498 ई. में एस्तादो द इंडिया के नाम से पुर्तगाली कंपनी की स्थापना की गई। भारत में प्रथम पुर्तगाली किले की स्थापना 1503 ई. में कोचीन में तथा द्वितीय किले की स्थापना 1505 ई. में कुन्नूर में की गई।
- प्रथम गवर्नर के रूप में 'फ्राँसिस्को डी अल्मीडा' का भारत आया। अल्मीडा द्वारा भारत में नीले या शांत जल की नीति को अपनाया गया।
- 1509 ई. में 'अल्फांसो डी अल्बुकर्क' अगले पुर्तगाली गवर्नर के रूप में भारत आया, जिसे भारत में पुर्तगाली शक्ति का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। 1510 ई. में अल्बुकर्क ने गोवा को बीजापुर के शासक यूसुफ आदिलशाह से छीनकर अपने नियंत्रण में लिया। अल्बुकर्क ने 1511 ई. में मलक्का तथा 1515 ई. में फारस की खाड़ी में स्थित होर्मुज़ पर भी अधिकार कर लिया। इसी समय हिंदू महिलाओं के साथ विवाह की नीति भी अपनाई गई।
- अल्बुकर्क के बाद 1529 ई. में नीनो डी कुन्हा अगला पुर्तगाली गवर्नर बनकर भारत आया। 1530 ई. में कुन्हा ने पुर्तगालियों की औपचारिक राजधानी कोचीन से गोवा स्थानांतरित कर दी। कुन्हा ने हुगली और सेंट टोमे में पुर्तगाली बस्तियों को स्थापित किया। इसके अतिरिक्त, 1534 ई. में बसीन तथा 1535 ई. में दीव पर अधिकार कर लिया।

इकाई

2

बंगाल एवं मैसूर विजय
(Conquest of Bengal and Mysore)

- अंग्रेज़ों की बंगाल विजय
  - ➤ प्लासी का युद्ध
  - ➤ प्लासी के युद्ध के बाद का घटनाक्रम
  - ➤ बक्सर का युद्ध
- अंग्रेज़ों की मैसूर विजय
  - ➤ प्रथम आँग्ल-मैसूर युद्ध
  - ➤ द्वितीय आँग्ल-मैसूर युद्ध
  - ➤ तृतीय आँग्ल-मैसूर युद्ध
  - ➤ चतुर्थ आँग्ल-मैसूर युद्ध

अंग्रेज़ों की बंगाल विजय (Victory of British over Bengal)

- अंग्रेज़ों द्वारा बंगाल की विजय 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की महत्त्वपूर्ण घटना थी। बंगाल राज्य भारत के अन्य राज्यों की तुलना में धनी और समृद्ध था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने शुरुआती दौर में बंगाल राज्य में व्यापार करके बहुत अधिक लाभ कमाया, जिसने अंग्रेज़ों की व्यापारिक महत्त्वाकांक्षाओं को बढ़ाने का काम किया। जॉब चारनाक द्वारा कलकत्ता की स्थापना के साथ ही ब्रिटिश कंपनी की व्यापारिक महत्त्वाकांक्षाएँ राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं में बदलने लगीं।
- बंगाल के नवाब के राजकीय पद का स्थायित्व स्थानीय ज़मींदारों, धनाढ्यों तथा अभिजात्य वर्ग के समर्थन पर निर्भर करता था। 1756 ई. में सिराजुद्दौला बंगाल का नवाब बना किंतु सिराजुद्दौला की मौसी घसीटी बेगम तथा भाई शौकत जंग द्वारा उत्तराधिकार का विरोध किया गया। सिराजुद्दौला के अन्य विरोधियों में मीरज़ाफर, जगतसेठ, रायदुर्लभ, अमीरचंद तथा राजवल्लभ सम्मिलित थे।
- वहीं दूसरी तरफ, अंग्रेज़ों की बढ़ती व्यापारिक गतिविधियों ने नवाब सिराजुद्दौला को संकट में डाल दिया। इसी अनिश्चितता के वातावरण में सिराजुद्दौला ने 1756 ई. में कलकत्ता पर आक्रमण कर दिया तथा फोर्ट विलियम पर कब्ज़ा कर लिया।
- इसके परिणामस्वरूप मद्रास से क्लाइव और वाटसन के नेतृत्व में ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना कलकत्ता पहुँची, जिसने 1757 ई. में नवाब से 'अलीनगर की संधि' की। इस संधि के अनुसार, अंग्रेज़ों को कलकत्ता की किलेबंदी तथा व्यापार करने के पुराने अधिकार मिल गए और कलकत्ता पर अधिकार करने में अंग्रेज़ों को जो क्षति हुई उसकी क्षतिपूर्ति का वचन भी नवाब द्वारा दिया गया।

ब्लैक होल की घटना (Black Hole Event)

इस घटना के अंतर्गत अंग्रेज़ बंदियों को, (जिनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी सम्मिलित थे) एक कक्ष के अंदर बंद कर दिया गया। इस घटना का वर्णन करने वाले अंग्रेज़ अधिकारी जे.जेड. हालवेल ने बताया कि नवाब ने 20 जून की रात को 146 अंग्रेज़ कैदियों को 18 फुट लंबी और 14 फुट 10 इंच चौड़ी कोठरी में बंद कर दिया। अगले दिन हालवेल सहित मात्र 23 व्यक्ति ही ज़िंदा बचे। ब्लैक होल के नाम से जानी गई इस घटना की सत्यता को लेकर संदेह है। ध्यातव्य है कि समकालीन इतिहासकार गुलाम हुसैन की पुस्तक 'सियार-उल-मुत्खेरिन' में भी इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता।

प्लासी का युद्ध (23 जून, 1757)	बक्सर का युद्ध (22 अक्तूबर, 1764)
रॉबर्ट क्लाइव तथा सिराजुद्दौला की सेना के मध्य	मेजर मुनरो तथा मीर कासिम, नवाब शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाह आलम द्वितीय की सेना के मध्य
परिणाम	**परिणाम**
अंग्रेज़ों ने मीरज़ाफर को बंगाल का कठपुतली नवाब बनाया	इलाहाबाद की प्रथम तथा द्वितीय संधि तथा बंगाल अंग्रेज़ों के अधीन

प्लासी का युद्ध (Battle of Plassey), 1757 ई.

- अलीनगर की संधि के पश्चात् अंग्रेज़ आक्रांता की भूमिका में आ गए। 13 जून, 1757 ई. को क्लाइव ने अपने सैन्य अभियान का आरंभ चंद्रनगर से किया तथा शीघ्र ही प्लासी तक पहुँच गया।
- प्लासी की लड़ाई के पूर्व ही क्लाइव ने षड्यंत्र के द्वारा नवाब के प्रमुख अधिकारियों (प्रधान सेनापति मीर ज़ाफर, बंगाल का साहूकार जगतसेठ, रायदुर्लभ तथा अमीरचंद) को अपनी तरफ मिला लिया।
- 23 जून, 1757 ई. को प्रतिद्वंद्वी सेनाएँ आपस में टकराईं, जिसमें अंग्रेज़ी सेना का नेतृत्व क्लाइव ने किया, वहीं नवाब की सेना का नेतृत्व विश्वासघाती मीरज़ाफर के हाथों में था। इन्हीं राजद्रोहियों के कारण सिराजुद्दौला के विश्वसनीय सैनिक मीर मदान एवं मोहनलाल वीरगति को प्राप्त हुए और सिराजुद्दौला ने भागकर मुर्शिदाबाद में शरण ली, जहाँ मीरज़ाफर के पुत्र ने उसकी हत्या कर दी।
- युद्ध के बाद मीरज़ाफर को अंग्रेज़ों ने नवाब घोषित कर दिया, जिसके बदले में मीरज़ाफर ने अंग्रेज़ों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा में मुक्त व्यापार का अधिकार प्रदान किया तथा 24 परगना की ज़मींदारी भी प्रदान की गई। बंगाल की समस्त फ्राँसीसी बस्तियाँ अंग्रेज़ों के अधिकार में आ गईं। साथ ही, यह भी निश्चित हुआ कि भविष्य में अंग्रेज़ पदाधिकारियों तथा व्यापारियों को निजी व्यापार पर कोई चुंगी नहीं देनी होगी।
- प्लासी का युद्ध एक छोटी सी झड़प थी, जिसका कोई सामरिक महत्त्व नहीं था। अंग्रेज़ों ने इस युद्ध में किसी सैनिक योग्यता का प्रदर्शन नहीं किया था, बल्कि राजनीतिक षड्यंत्रों तथा विश्वासघातियों के बल पर प्लासी के युद्ध को जीता था। के.एम. पणिक्कर के अनुसार, यह एक युद्ध न होकर सौदा था, जिसमे बंगाल के धनी सेठों तथा मीरज़ाफर ने नवाब को अंग्रेज़ों के हाथों बेच डाला।
- प्लासी के युद्ध के बाद बंगाल धीरे-धीरे अंग्रेज़ों के अधीन हो गया। नवाब मीरज़ाफर पूर्णतया अंग्रेज़ों पर निर्भर था। अब कंपनी सिर्फ व्यापारिक कंपनी नहीं रही, बल्कि एक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति बन गई तथा किंगमेकर की भूमिका में आ गई। इसे इस संदर्भ में भी देखा जा सकता है कि जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल के नवाब मीरज़ाफर को पदच्युत किया तब मुगल बादशाह मूकदर्शक बने रहे।
- प्लासी की लड़ाई के पश्चात् बंगाल के अनंत संसाधनों पर अंग्रेज़ों का अधिकार हो गया। बंगाल में अंग्रेज़ों को हर्जाने के रूप में मिली पहली किस्त 8 लाख पौंड की थी, जो चाँदी के सिक्कों के रूप में थी। इसके पश्चात् बंगाल को लूटने का निरंतर क्रम चलता रहा तथा ब्रिटिश कंपनी बंगाल से अन्य विदेशी शक्तियों जैसे– डचों,

इकाई

3

मराठों पर नियंत्राण
(Control over Marathas)

- आँग्ल-मराठा संघर्ष
  - ➤ प्रथम आँग्ल-मराठा युद्ध
  - ➤ द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध
  - ➤ तृतीय आँग्ल-मराठा युद्ध
- मराठों की असफलता के कारण
  - ➤ आपसी गुटबंदी और असंगठित मराठा संघ
  - ➤ मराठों की युद्ध नीति
  - ➤ योग्य नेतृत्व का अभाव
  - ➤ अंग्रेज़ों की उत्तम कूटनीति

आँग्ल-मराठा संघर्ष (Anglo–Maratha Struggle)

- मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् क्षेत्रीय शक्तियों में मराठा प्रभावशाली होकर उभर रहे थे तो वहीं अंग्रेज़ बंगाल विजय के पश्चात् यूरोपीय शक्तियों में अपनी सर्वोच्चता सिद्ध कर चुके थे।
- मराठा शक्ति के उभार ने यह निश्चित कर दिया कि भारत में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के लिये यह अनिवार्य था कि अंग्रेज़ों का मराठों के साथ संघर्ष हो। इसी परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों ने मराठों के साथ तीन युद्ध लड़े तथा भारत में ब्रिटिश सत्ता को सुदृढ़ किया।
- मराठवाड़ा क्षेत्र पर ब्रिटिश हस्तक्षेप का मुख्य कारण वाणिज्यिक हितों से संबंधित था। 1784 ई. के पश्चात् चीन के साथ ब्रिटिश कंपनी के कपास के व्यापार हेतु तथा गुजरात और बॉम्बे के तट से होने वाली व्यापारिक गतिविधियों ने मराठा क्षेत्र में अंग्रेज़ों की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई।

प्रथम आँग्ल-मराठा युद्ध, 1775-82 ई.	
गवर्नर जनरल: वारेन हेस्टिंग्स	सालबाई की संधि

↓

द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध, 1803-05 ई.	
गवर्नर जनरल: लार्ड वेलेजली	बसीन की संधि

↓

तृतीय आँग्ल-मराठा युद्ध, 1817-18 ई.	
गवर्नर जनरल: लार्ड हेस्टिंग्स	मराठा संघ का विघटन

- ➤ पेशवा ने निज़ाम से चौथ प्राप्त करने का अधिकार छोड़ दिया तथा गायकवाड़ के विरुद्ध युद्ध न करने का वचन अंग्रेज़ों को दिया।
- ➤ पेशवा ने कंपनी की विरोधी यूरोपीय शक्तियों को अपनी सीमाओं में नहीं रहने देने की बात स्वीकार की।

- अंग्रेज़ों के परिप्रेक्ष्य से बसीन की संधि का महत्त्व इस प्रकार है–
  - ➤ बसीन की संधि किसी एक राज्य के साथ न होकर राज्यों के संघ के साथ की गई थी।
  - ➤ पेशवा केवल पूना का ही नहीं बल्कि मराठा संघ का भी अध्यक्ष था, फलतः संघ के अधीनस्थ राज्य भी बसीन की संधि के उपरांत स्वतः ही अंग्रेज़ों के अधीन हो गए।
  - ➤ अंग्रेज़ों की सहायक सेना अब मैसूर, हैदराबाद तथा लखनऊ के साथ-साथ पूना में भी नियुक्त कर दी गई, जो भारत के मुख्य केंद्रीय स्थल थे। अब ब्रिटिश सेना समस्त भारत में शीघ्रातिशीघ्र पहुँच सकने में समर्थ थी।
- बसीन की संधि ने पेशवा को युद्धों के भार से मुक्त कर दिया। अब मराठों ने हैदराबाद और गायकवाड़ के विरुद्ध युद्ध न करने की नीति अपनायी तथा अपने अधीनस्थ क्षेत्रों को कंपनी के अधीन कर दिया।
- यह संधि मराठों के लिये अपमानजनक संधि थी, जिसने द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध की नींव रखने का काम किया। बसीन की सहायक संधि के बाद भोंसले, सिंधिया और पेशवा ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध युद्ध किया, जबकि गायकवाड़ और होल्कर इस संघर्ष से अलग रहे। द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध के दौरान हुई अन्य संधियाँ इस प्रकार हैं–

क्र.सं.	क्षेत्रीय शक्तियाँ	संधि	वर्ष	महत्त्वपूर्ण बिंदु
1.	**भोंसले**	देवगाँव की संधि	1803 ई.	अंग्रेज़ों को कटक तथा वर्धा नदी का पश्चिमी भाग प्राप्त हुआ।
2.	**सिंधिया**	सुर्जीअर्जन गाँव की संधि	1803 ई.	गंगा-यमुना के दोआब प्रदेश, राजस्थान के कुछ क्षेत्र, अहमदनगर का दुर्ग, भड़ौच, गोदावरी और अजंता घाट का क्षेत्र अंग्रेज़ों को प्राप्त हुआ।
3.	**होल्कर**	राजपुरघाट की संधि	1805 ई.	चंबल नदी के उत्तरी प्रदेश और बुंदेलखंड का क्षेत्र अंग्रेज़ों को प्राप्त हुआ।

- द्वितीय आँग्ल-मराठा युद्ध ने मराठा शक्ति का अंत तो नहीं किया, अपितु मराठा शक्ति को निर्बल अवश्य कर दिया। इस युद्ध के संदर्भ में सिडनी ओवन ने कहा था कि इस संधि के फलस्वरूप कंपनी को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से भारत का साम्राज्य मिल गया।

तृतीय आँग्ल-मराठा युद्ध (Third Anglo-Maratha War), 1817-18 ई.

- वेलेजली के पश्चात् अंग्रेज़ों ने अहस्तक्षेप तथा तटस्थता की नीति को अपनाया तथा यह नीति लॉर्ड हेस्टिंग्स के आने तक ज़ारी रही। लॉर्ड हेस्टिंग्स भी वेलेजली की तरह साम्राज्यवादी नीति का पालन करते थे।
- यही कारण है कि हेस्टिंग्स जब गवर्नर जनरल बनकर भारत आया तब उसने अंग्रेज़ी श्रेष्ठता को स्थापित करने हेतु क्षेत्रीय शक्तियों के विरुद्ध दमनात्मक नीति का पालन किया।
- इसी क्रम में हेस्टिंग्स ने मराठा क्षेत्र में पिंडारियों की शक्ति के दमन के लिये अभियान की शुरुआत की। मराठा क्षेत्र में पिंडारी, जो मराठों की सेना में शामिल होते थे अब वे स्वतंत्र रूप से लूटमार कर रहे थे। लूट का एक हिस्सा वे मराठों को कर के रूप में देते थे।

इकाई

4

सिंध, पंजाब एवं अवध विजय
(Sindh, Punjab and Awadh Conquest)

- सिंध विजय
- पंजाब विजय
  - ➤ रणजीत सिंह
  - ➤ प्रथम आँग्ल-सिख युद्ध
  - ➤ द्वितीय आँग्ल-सिख युद्ध
- अवध
- सहायक संधि प्रणाली
- व्यपगत सिद्धांत/विलय नीति

सिंध विजय (Victory over Sindh), 1843 ई.

- अट्ठारहवीं सदी में, सिंध पर कल्लौरा सरदारों का शासन था। 1770 ई. के दशक में, तालपुरों की बलूच जनजाति पहाड़ी क्षेत्रों से सिंध के मैदानी इलाकों में आकर बस गई। 1783 ई. में, तालपुर जनजाति ने मीर फतेह अली खान के नेतृत्व में कल्लौरा वंश को अपदस्थ कर सिंध पर पूर्ण अधिकार जमा लिया।
- 1800 ई. में मीर फतह अली की मृत्यु के पश्चात् इसके भाइयों ने सिंध को तीन भागों (हैदराबाद, मीरपुर और खैरपुर) में विभाजित कर आपस बांट लिया और 'अमीर' की उपाधि धारण कर स्वतंत्र रूप से शासन करने लगे, ये अफगानिस्तान की नाममात्र की अधीनता स्वीकार करते थे।
- उल्लेखनीय है कि सिंध की व्यापारिक एवं नौगम्यता के महत्त्व के कारण ब्रिटिश इस क्षेत्र पर अपना प्रभुत्त्व स्थापित करना चाहते थे।
- इसी क्रम में, जून 1807 ई. में नेपालियन तथा रूस के साथ टिलसित की संधि के पश्चात् ब्रिटिशों के पूर्वी साम्राज्य पर फ्राँसिसी आक्रमण की आशंका को बढ़ा दिया, तत्पश्चात् लार्ड मिंटो ने 1809 ई. में सिंध के अमीरों के साथ 'शाश्वत मित्रता' की संधि की। इसके तहत यह सुनिश्चित किया गया कि सिंध में फ्राँसीसियों को बसने की अनुमति नही दी जायेगी।
- सिंध की नौगम्य महत्ता के कारण 'बोर्ड ऑफ कंट्रोल' के प्रधान लार्ड एलनबरो की आज्ञा पर एलेक्जेंडर बर्न्स सिंधु नदी की खोज करने के उद्देश्य से जल मार्ग से लाहौर पहुँचा। बर्न्स की नौकाओं को देखकर सिंध के एक सैय्यद ने यह कहते हुए दु:ख प्रकट किया कि "अंग्रेजों ने सिंध विजय का राजमार्ग देख लिया," जो कालांतर में सही सिद्ध हुई।
- 1832 ई. को विलियम बैंटिक द्वारा भेजे गए कर्नल पोंट्टीगर ने सिंध के अमीरों के साथ एक संधि हस्ताक्षरित की। इसके अंतर्गत, अंग्रेज व्यापारियों एवं यात्रियों को सिंध से होकर आवागमन के साथ-साथ व्यापारिक उद्देश्यों के लिये सिंधु नदी का प्रयोग करने की अनुमति मिल गई, किंतु सैन्य सामग्री एवं युद्धपोतों के आवागमन प्रतिबंधित होंगे। साथ ही, कोई भी अंग्रेज व्यापारी सिंध में नहीं बसेगा और यात्रियों के लिये पासपोर्ट जरूरी होगा। प्रशुल्क दरें, अमीरों द्वारा परिवर्तित की जा सकेंगी और किसी प्रकार के सैन्य अधिभारों या कर की मांग सिंध से नहीं की जाएगी।

- 1764 ई. में सिख समुदाय के कुछ महत्त्वपूर्ण सरदार अमृतसर में इकट्ठा हुए और देग, तेग एवं फतेह लेखयुक्त युद्ध चांदी के सिक्के चलाए। इसी के साथ पंजाब में सिक्ख संप्रभुता की स्थापना हुई।

सिख कुल 12 मिस्लों (राज्य) में विभाजित थे। जो निम्नलिखित हैं–

क्रम	मिसल	संस्थापक	क्रम	मिसल	संस्थापक
1.	**सुकरचकिया**	चढ़त सिंह	7.	**रामगढ़िया**	जस्सा सिंह
2.	**अहलूवालिया**	जस्सा सिह	8.	**फुलकिया**	संधू जाट चौधरी
3.	**भंगी**	छज्जा सिंह	9.	**करोड़ सिंहिया**	भगेल सिंह
4.	**कन्हैया**	जय सिंह	10.	**दलेवलियाग**	गुलाब सिंह
5.	**शहीद मिसल**	बाबा दीप सिंह	11.	**सिंहपुरिया**	नवाब कपूर सिंह
6.	**निशलावाल**	सरदार संगत सिंह	12.	**नकाई**	हीरा सिंह

- इनमें मुख्यत: पाँच मिसल से शक्तिशाली थी – सुकरचकिया, भंगी, अहलूवालिया, कन्हैया और नकाई। इनमें भंगी मिसल सबसे शक्तिशाली थी। सुकरचकिया मिसल रावी एवं चिनाव के बीच स्थित था। रणजीत सिंह इसी मिसल से संबंधित थे।

रणजीत सिंह (Ranjit Singh)

- सुकरचकिया मिसल के नेता महासिंह के यहाँ 1780 ई. रणजीत सिंह का जन्म हुआ। बचपन में ही इनका विवाह कन्हैया मिसल की कन्या से कर दिया गया। फलत: रणजीत सिंह को कन्हैया मिसल के सभी प्रदेश मिल गए। 12 वर्ष की आयु में पिता के निधन के उपरांत रणजीत सिंह सुकरचकिया मिसल के प्रमुख बने।
- अफगानिस्तान के शासक जमानशाह ने 1798 ई. में सिक्खों पर आक्रमण किया। रणजीत सिंह ने अफगान सेना को पीछे खदेड़ दिया। वापस जाते समय जमानशाह की 12 तोपें चेनाब नदी में गिर गई। रणजीत सिंह ने इन्हें निकलवाकर उसके पास वापस भेज दिया। इस सेवा के बदले जमानशाह ने उसे 'राजा' की उपाधि दी और लाहौर का अपना सूबेदार मान लिया।
- रणजीत सिंह ने 1799 ई. में लाहौर पर कब्जा कर लिया। तत्पश्चात् अमृतसर को थी भंगी मिसल से छीन लिया। इस प्रकार, रणजीत सिंह ने लाहौर को पंजाब की राजनीतिक और अमृतसर को धार्मिक राजधानी बनाया।
- रणजीत सिंह ने सिस-सतलज (सतलज के पूर्व) के राज्यों को जीतने का प्रयास किया। 1806 ई. में रणजीत सिंह ने प्रथम बार सतलज को पार पर लुधियाना पर अधिकार कर लिया। अंग्रेजों को रणजीत सिंह का यह कार्य पसंद नहीं आया। उन्होंने इन राज्यों के सरदारों को अंग्रेजों से सहयता मांगने के लिए प्रोत्साहित किया। फलत: इन राज्यों यथा नाभा, पटियाला, जीन्द ने रणजीत सिंह के विरुद्ध अंग्रेजों से सहयता मांगी।
- 1809 ई. में ब्रिटिश अधिकारी डेविड ऑक्टरलोनी ने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि सिस-सतलज के राज्य हमारे संरक्षण में है और इसकी सरक्षा की जिम्मेदारी हमारी है। परंतु इस समय अंग्रेजों को फ्राँस के आक्रमण का भय था। अत: रणजीत सिंह से वे युद्ध करने की स्थिति में न थे। अत: गवर्नर जनरल लॉर्ड मिंटो नेमटकॉफ को रणजीत सिंह से समझौता करने को भेजा।
- मेटकॉफ व रणजीत सिंह ने, 25 अप्रैल, 1809 को अमृतसर में संधि पर हस्ताक्षर किए। इसके अनुसार, सतलज नदी के उत्तर के 45 परगनों पर अंग्रेजों ने रणजीत सिंह का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। रणजीत सिंह ने सतलज

इकाई

5

ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (क)
(British Economic Policies and their impacts)

- ब्रिटिश उपनिवेशवाद
  - ➤ भारत में उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण
    - ■ वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण, 1757–1813 ई.
    - ■ औद्योगिक पूंजीवादी चरण, 1813–1858 ई.
    - ■ वित्तीय पूंजीवादी चरण, 1858 के पश्चात्
- ब्रिटिशकालीन भू-राजस्व व्यवस्था
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ स्थायी बंदोबस्त

ब्रिटिश उपनिवेशवाद (British Colonialism)

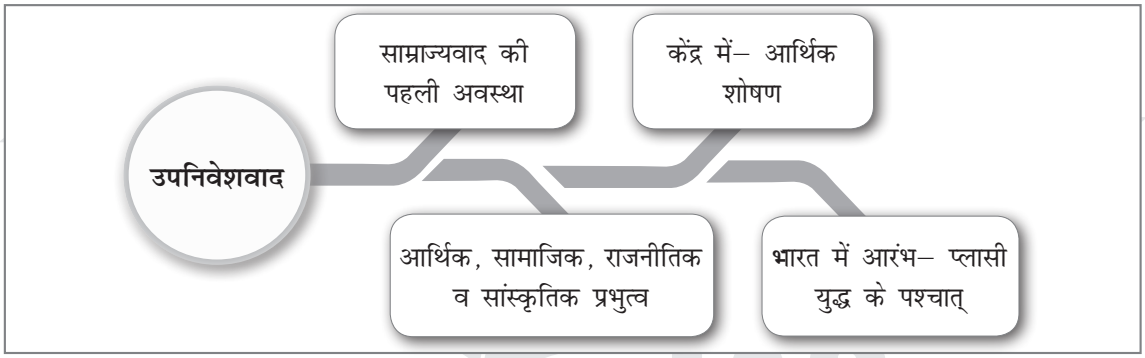

- उपनिवेशवाद शब्द का तात्पर्य एक विदेशी क्षेत्र पर प्रत्यक्ष शासन द्वारा विभिन्न प्रकार के लाभ उठाने से है। इसके अंतर्गत उपनिवेश देश के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों पर अधिकार करना तथा विदेशी आबादी को उपनिवेश में बसाना सम्मिलित है। लेनिन के अनुसार, "साम्राज्यवाद पूंजीवाद का चरम रूप है अर्थात् साम्राज्यवाद पूंजीवादी विकास का वह चरण है, जब एकाधिकार व वित्तीय पूंजी का प्रभुत्व स्थापित हो जाता है।"
- उपनिवेशवाद एक ऐसी संरचना है, जिसके माध्यम से मुख्य रूप से किसी भी देश का आर्थिक शोषण होता है। उपनिवेश प्राप्त करने की होड़ औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप शुरू हुई थी। भारत भी इसी दौरान ब्रिटेन का एक उपनिवेश बना जहाँ औपनिवेशिक नीतियों में परिवर्तन इंग्लैंड के आर्थिक ढाँचे में आए परिवर्तन के परिणामस्वरूप संपन्न हुआ।
- रजनी पाम दत्त ने अपनी कृति 'इंडिया टुडे' में ब्रिटिशकालीन भारतीय औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का चित्रण किया है।

भारत में उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण (Different Phases of Colonialism in India)

उपनिवेशवाद का केंद्र-बिंदु आर्थिक शोषण है। इसके विभिन्न स्वरूप हो सकते है, जैसे-जैसे शोषण के स्वरूप में बदलाव आता है, औपनिवेशिक नीतियों में भी परिवर्तन होता रहता है। ब्रिटेन की आर्थिक संरचना के अनुरूप भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद विभिन्न चरणों से होकर गुजरा और प्रत्येक चरण गुणात्मक दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न था।

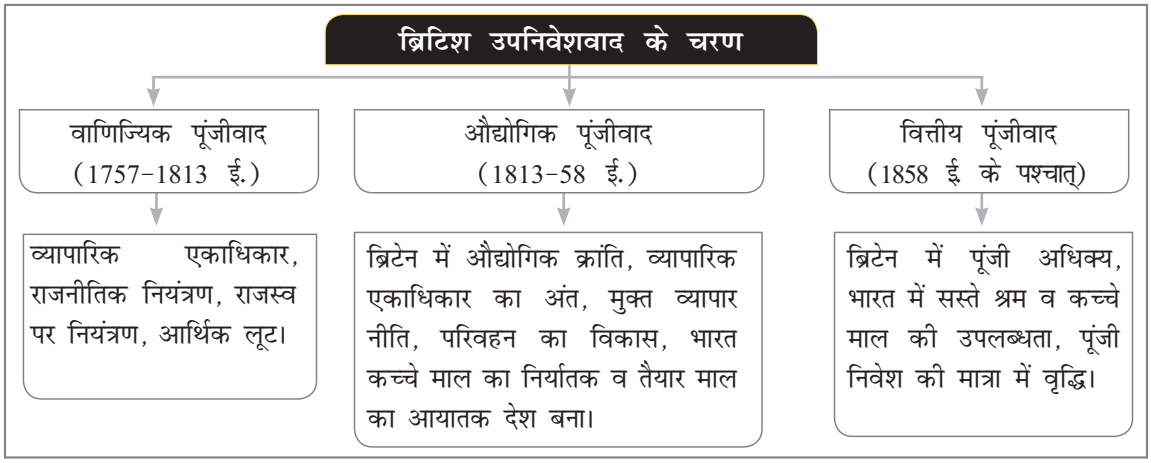

वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण, 1757-1813 ई. (Commercial Capitalist Phase, 1757-1813 AD)

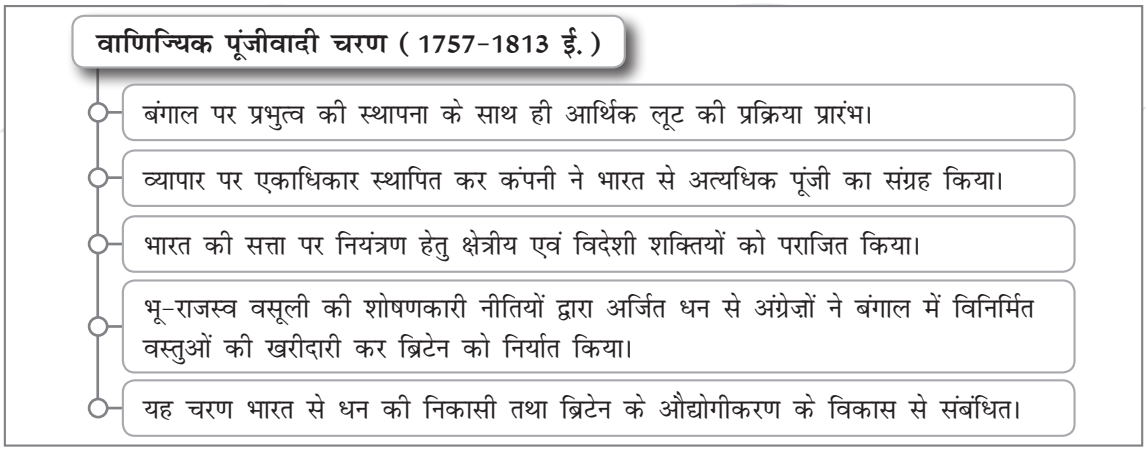

- 1757 ई. में प्लासी के युद्ध के पश्चात् कंपनी ने बंगाल पर अपने प्रभुत्व की स्थापना की तथा भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद को स्थापित किया। ब्रिटिशों की साम्राज्यवादी मानसिकता को उपनिवेशवाद के प्रथम चरण के दौरान देखा गया, जिसे वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण के रूप में जाना जाता है। इस चरण के दौरान अंग्रेज़ों का ध्यान आर्थिक लूट पर केंद्रित था। इसी आर्थिक लूट ने इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।
- इस चरण के दौरान ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत से अत्यधिक पूंजी का संग्रह किया तथा भारत के व्यापार पर कंपनी का एकाधिकार स्थापित हुआ। फलतः कंपनी ने भारत से वस्तुओं को कम कीमत पर खरीद कर यूरोप के बाज़ारों में अधिक कीमत पर बेचकर खूब लाभ कमाया।
- उपनिवेशवाद के प्रथम चरण के दौरान ही कंपनी ने भारत की सत्ता पर अपना नियंत्रण स्थापित करने हेतु क्षेत्रीय शक्तियों को परास्त कर अपने अधीन किया ताकि विजित किये गए क्षेत्रों की सरकारी आय पर कंपनी का पूर्ण नियंत्रण स्थापित हो सके।

नकारात्मक प्रभाव (Negative Impacts)

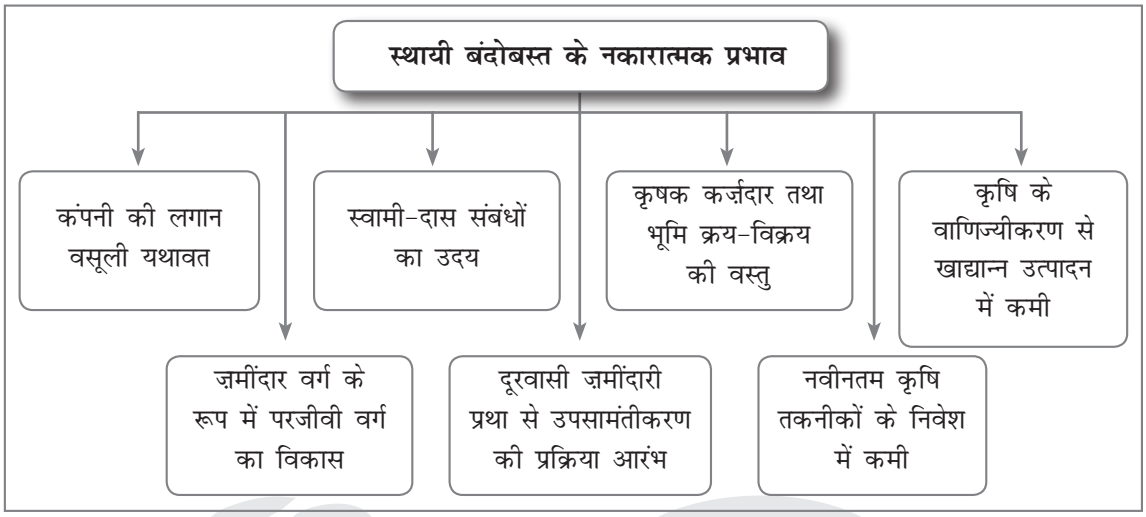

- लगान वसूली के स्थायी होने से कृषि उत्पादन में वृद्धि होने पर भी ब्रिटिश कंपनी के लगान प्राप्ति में कोई वृद्धि नहीं हुई। वहीं दूसरी तरफ, बढ़ते हुए साम्राज्य विस्तार के लिये अंग्रेज़ों को अधिक धनराशि की आवश्यकता थी, जबकि स्थायी बंदोबस्त से अंग्रेज़ों की लगान वसूली यथावत् बनी रही।
- ज़मींदार वर्ग के रूप में परजीवी वर्ग का विकास हुआ, जिसने किसानों का शोषण करके अपनी आय एवं सम्मान में वृद्धि की। वहीं दूसरी तरफ ज़मींदार वर्ग की प्रगतिशील गतिविधियों में अरुचि ने कृषि के विकास को अवरुद्ध किया, जिसका परिणाम कृषक विद्रोहों के रूप में सामने आया।
- साथ ही, भूमि पर स्वामित्व का अधिकार प्राप्त होने से ज़मींदारों, महाजनों और साहूकारों ने अपनी पूंजी का निवेश भूमि के सम्बंध में किया फलतः उद्योगों में भी निवेश कम हुआ।
- स्थायी बंदोबस्त प्रणाली ने उपज के तीन भागीदार बना दिये- ब्रिटिश सरकार, ज़मींदार और किसान। ज़मींदारों का कृषि से पर होने पर भी उन्हें भूमि का मालिक बना दिया गया तथा निश्चित समय तक लगान न देने पर ज़मींदारी नीलाम कर दी जाती थी।
- इस प्रकार ज़मींदार अंग्रेज़ों के रैयत की भाँति थे। वहीं दूसरी तरफ कृषकों को ज़मींदारों का व्यक्तिगत रैयत बना दिया गया, जो किसानों के शोषण एवं उत्पीड़न से लगान की वसूली करने लगे। इस प्रकार इस प्रणाली ने ज़मींदारों और कृषकों के संबंधों को सामंतवादी प्रवृत्ति के अनुसार, स्वामी-दास संबंधों में बदल दिया।
- इस प्रणाली के अंतर्गत सूर्यास्त कानून ने अनुपस्थित या दूरवासी ज़मींदारी प्रथा को उत्पन्न किया। ज़मींदारी अधिकारों की नीलामी के कारण अधिकांश भूमि नए ज़मींदारों के हाथों में आ गई, जिससे एक तरफ तो पुराने ज़मींदारों की रुचि कृषि विकास में निवेश करने की नहीं रही, वहीं दूसरी तरफ नए ज़मींदार व्यापारी वर्ग से संबंधित होते थे, जो नगरों में रहकर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि भूमि पर नियंत्रण रखते थे। इन नए ज़मींदारों ने भी कृषि के विकास की गतिविधियों में अपनी अरुचि दिखाई। साथ ही, अब उपयुक्त प्रक्रिया में बिचौलियों का प्रवेश भी होने लगा, जिससे उपसामंतीकरण की प्रक्रिया आरंभ हुई। फलतः मुद्रा का पलायन अब ग्रामीण क्षेत्र से नगरीय क्षेत्र की तरफ होने लगा।

इकाई

5

ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (ख)
(British Economic Policies and their impacts)

- रैयतवाड़ी बंदोबस्त
- महालवाड़ी बंदोबस्त
- भू-राजस्व व्यवस्था का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव
- वि-औद्योगीकरण
- कृषि का वाणिज्यीकरण
- आधुनिक उद्योगों का विकास

रैयतवाड़ी बंदोबस्त (Ryotwari Settlement)

भूमिका (Introduction)

- भू-राजस्व वसूली के संदर्भ में स्थायी बंदोबस्त प्रणाली ब्रिटिश आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अक्षम सिद्ध हुई। वहीं दूसरी तरफ, बेंथम, रिकार्डो, जेम्स मिल आदि की प्रचलित उपयोगितावादी विचारधारा ने भी ब्रिटिश सरकार को प्रभावित किया, फलतः रैयतवाड़ी बंदोबस्त को लाया गया।
- रिकार्डो के अनुसार, उपजाऊ भूमि पर जो अधिशेष होता है, वह किराया है, जिसे ज़मींदारों द्वारा हड़प लिया जाता है, जबकि वास्तव में यह अधिशेष सरकार को मिलना चाहिये तथा उत्पादक और सरकार के मध्य सभी बिचौलियों को हटा देना चाहिये। इसी प्रकार जेम्स मिल के अनुसार, चूँकि राज्य भूमि का स्वामी होता है, अतः भूमि के अधिशेष पर सरकार का अधिकार बनता है।
- रैयतवाड़ी व्यवस्था को दक्षिण और पश्चिम भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार के साथ ही नवीन भू-राजस्व व्यवस्था के रूप में लाया गया, क्योंकि यहाँ ज़मींदार वर्ग अनुपस्थित था। इस क्षेत्र में भौगोलिक विविधता अधिक थी तथा यहाँ प्रत्येक ग्रामीण समुदाय का अपना महत्त्व था। यही कारण है कि स्थायी बंदोबस्त से भिन्न भू-राजस्व व्यवस्था को प्रस्तुत किया गया।
- इसके अतिरिक्त स्थायी बंदोबस्त प्रणाली कंपनी के लिये घाटे का सौदा सिद्ध होती जा रही थी, जबकि कंपनी को निरंतर हो रहे युद्धों के कारण वित्तीय दबाव का सामना करना पड़ रहा था। इसलिये, कंपनी ने ज़मींदारों के रूप में मध्यस्थों को समाप्त करते हुए रैयतवाड़ी भू-राजस्व व्यवस्था को शुरू करने की रणनीति बनायी।
- 1792 ई. में सर्वप्रथम कर्नल रीड ने बारामहल ज़िले (मद्रास) में रैयतवाड़ी बंदोबस्त को लागू कर सीधे किसानों से लगान वसूली संबंधी समझौता किया। इसके पश्चात् थॉमस मुनरो ने 1809 ई. तक इस भू-राजस्व प्रणाली को मद्रास प्रांत के कुछ हिस्सों पर लागू किया, जिसका विस्तार 1820 ई. में मुनरो के स्वयं मद्रास के गवर्नर बनने के पश्चात् संपूर्ण प्रदेश तक में दिया गया। 1825 ई. में यह प्रणाली एलिफिंस्टन द्वारा बंबई में लागू की गई। 1836 ई. के पश्चात् जॉर्ज विंगेट और गोल्डस्मिथ के द्वारा भी इस प्रणाली में सुधार कार्य किये गए।
- इस प्रकार रैयतवाड़ी प्रणाली कुल भू-भाग के 51 प्रतिशत भाग पर क्रियान्वित की गई, जिसमें मद्रास, बंबई के कुछ हिस्से, पूर्वी बंगाल, असम और कुर्ग आदि सम्मिलित थे।

सकारात्मक प्रभाव (Positive Impacts)

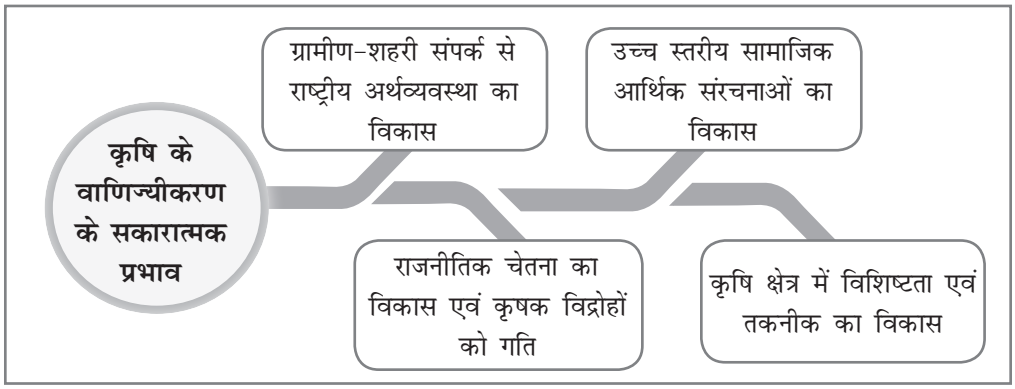

- कृषि के वाणिज्यीकरण से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में संपर्क स्थापित हुआ, ग्रामीण-शहरी संपर्क ने भारत की अर्थव्यवस्था को एकीकृत कर दिया। फलतः राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास का आधार तैयार हुआ।
- यातायात के साधनों के विकास एवं ग्रामीण-शहरी संपर्क ने देश में आपसी सहयोग एवं राजनीतिक चेतना को बढ़ाया, जिससे कृषक विद्रोह को गति मिली। फलतः काश्तकारी अधिनियम पारित किये गए तथा अंग्रेज़ों के विरुद्ध किसान संगठित हुए।
- ब्रिटेन की औद्योगिक क्रांति के लिये कच्चा माल तैयार करने के कारण भारत की अर्थव्यवस्था का जुड़ाव विश्व की अर्थव्यवस्था से हो गया, फलतः उच्च-स्तरीय सामाजिक एवं आर्थिक संरचनाओं का विकास हुआ।
- मुख्य क्षेत्रों में विशेष फसलों के उत्पादन से विशेषीकरण को बढ़ावा मिला। साथ ही, कृषि तकनीकों एवं सिंचाई साधनों को भी विकसित किया गया।

आधुनिक उद्योगों का विकास (Development of Modern Industries)

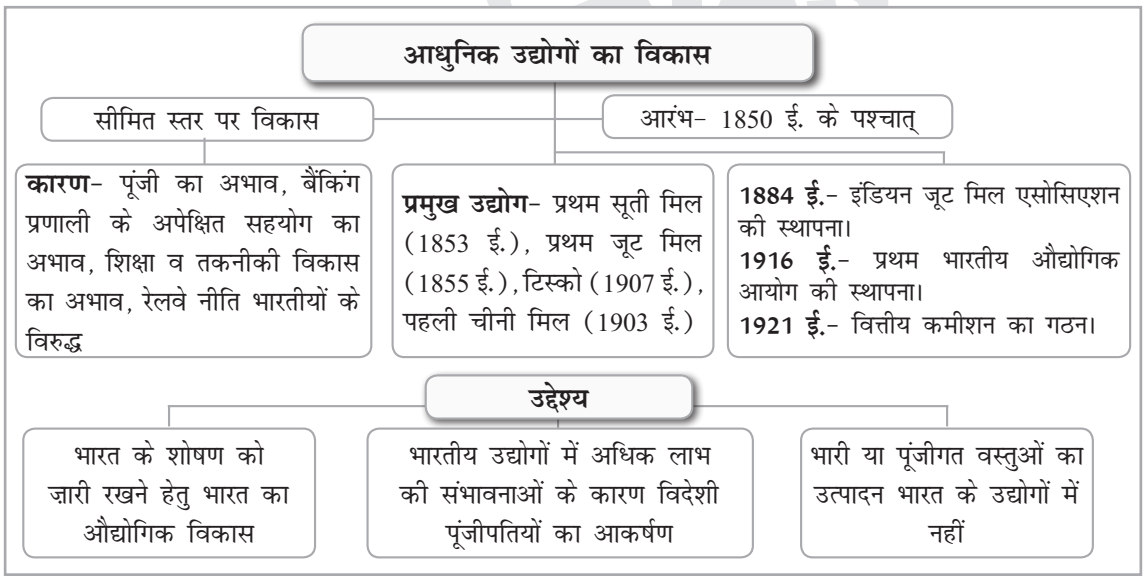

इकाई

5

ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव (ग)
(British Economic Policies and their impacts)

- रेलवे का विकास
  - ➤ उद्देश्य
  - ➤ रेलवे के विकास के प्रेरक तत्त्व
  - ➤ रेलवे के विकास का परिणाम
- ब्रिटिश आर्थिक नीति का मूल्यांकन
- धन का निष्कासन
- ब्रिटिश भारत में अकाल नीति का विकास
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ ब्रिटिश शासन में पड़ने वाले अकाल/दुर्भिक्ष
  - ➤ अकाल के कारण
  - ➤ अकाल दूर करने के संबंध में नीतियाँ
- भारत में बैंकिंग प्रणाली

रेलवे का विकास (Development of Railways)

- भारत में सर्वप्रथम रेल निर्माण का सुझाव 1831-32 ई. में लॉर्ड विलियम बंटिक के काल में दिया गया। किंतु, रेलवे लाइन बिछाने की योजना के प्रस्ताव को मूर्त रूप लार्ड डलहौज़ी ने प्रदान किया। 1853 ई. में डलहौज़ी के कार्यकाल में ही सर्वप्रथम बंबई से ठाणे के मध्य रेल का संचालन किया गया।
- भारत में रेलवे के विकास हेतु ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटेन की कंपनियों ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी तथा ग्रेट इंडियन पेनन्सुलर रेलवे के साथ समझौता किया। 'ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी' (EIRC) को कलकत्ता से रानीगंज (120 मील), 'ग्रेट इंडियन पेनांसुलर' (GIP) को बंबई से कल्याण (37 मील) और 'मद्रास रेलवे कंपनी' (MRC) को मद्रास से आरकोनम (40 मील) तक रेलवे लाइन का ठेका दिया गया। 1869 ई. तक इन कंपनियों ने भारत में 6000 किलोमीटर लंबी रेलवे लाइन का विकास कर दिया था।
- भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के तीव्र विस्तार हेतु रेलवे का विकास सरकारी उद्यम एवं निजी उद्यम के रूप में किया गया। इसके अतिरिक्त, ब्रिटिश सरकार ने भारत में रेलवे के विकास हेतु रेलवे आयोग को गठित किया। 1902 ई. में वायसराय लार्ड कर्ज़न के कार्यकाल में 'थॉमस रॉबर्ट्सन आयोग' तथा 1919 ई. में वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड के कार्यकाल में 'एक्वर्थ आयोग' का गठन किया।

उद्देश्य (Objectives)

- भारत में रेलवे का निर्माण ब्रिटिश सत्ता की आरंभिक एवं सैन्य हितों की पूर्ति के उद्देश्य से किया गया था। इसका प्रमुख उद्देश्य ब्रिटिश उद्योगों के लिये कच्चे माल की पूर्ति तथा तैयार माल के लिये बाज़ार की उपलब्धता सुनिश्चित करना था। साथ ही, भारतीय साम्राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में सेना का विस्तार एवं देश के प्रमुख नगरों एवं बंदरगाहों को उत्पादन (कच्चे माल) केंद्रों से जोड़ना था।
- इसके अतिरिक्त, भारतीय कपास उत्पादन क्षेत्रों से निर्यात में वृद्धि से इंग्लैंड की संयुक्त राज्य अमेरिका पर निर्भरता कम करना था।

- रेलवे के विकास एवं विस्तार ने देश की अर्थव्यवस्था में भी परिवर्तन कर दिया। रेलवे के माध्यम से वस्तु एवं श्रम की गतिशीलता द्वारा देश में विद्यमान क्षेत्रीय अंतरों को कम करने का प्रयास किया गया, जिससे राष्ट्रीय आंदोलन को गति प्राप्त हुई।

रेलवे से संबंधित महत्त्वपूर्ण तथ्य	
1831-32 ई.	भारत में सर्वप्रथम विलियम बेंटिक के काल में रेल निर्माण का सुझाव दिया गया।
1836 ई.	सर ए.पी. कॉटन ने मद्रास से बंबई तक रेलवे लाइन बिछाने का सुझाव दिया।
1843-44 ई.	पहली बार भाप गाड़ी बनाने का प्रस्ताव रखा गया।
1849 ई.	भारत सचिव ने 'ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी' (EIRC) तथा 'ग्रेट इंडियन पेनांसुलर रेलवे' (GIPR) कंपनी के साथ रेलवे के पहले इकरारनामे पर हस्ताक्षर किये।
16 अप्रैल, 1853	भारत में पहली रेल बंबई से ठाणे (34 कि.मी.) के बीच चलाई गई।
1849-67 ई.	भारत में रेलवे लाइन के निर्माण का कार्य निजी कंपनियों द्वारा किया गया।
1869-80 ई.	भारत में रेलवे लाइन के निर्माण का कार्य भारत सरकार द्वारा किया गया।
1880 ई. के पश्चात्	सरकार एवं निजी कंपनियों की साझेदारी में रेलवे लाइन के निर्माण का कार्य किया गया।
1905 ई.	रेलवे बोर्ड का गठन किया गया।
1919 ई.	एक्वर्थ आयोग का गठन किया गया।
1925 ई.	रेल व्यवस्था 'ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी' (EIRC) तथा 'ग्रेट इंडियन पेनांसुलर' (GIP) रेलवे कंपनी के हाथों से छीनकर सरकार के अंतर्गत कर दी गई।
1925 ई.	रेल बजट को आम बजट से अलग किया गया।

ब्रिटिश आर्थिक नीति का मूल्यांकन (Evolution of British Economic Policies)

- उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक भारत में ब्रिटिशों की आर्थिक नीतियों का समर्थन ही किया गया। अंग्रेज़ों द्वारा भारत का किया जा रहा विकास एवं आधुनिकीकरण को देश हित में माना जा रहा था, जबकि अंग्रेज़ों का उद्देश्य मातृ देश की हितों का ही संवर्द्धन करना था। 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतीयों की राजनीतिक चेतना का विकास हुआ तथा ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों का वास्तविक स्वरूप उजागर हुआ।
- ब्रिटिश आर्थिक नीति का वास्तविक मूल्यांकन राष्ट्रवादी नेताओं के द्वारा किया गया, उनके द्वारा ब्रिटिश सरकार की आर्थिक शोषण की नीतियों को सार्वजनिक किया गया तथा अंग्रेज़ों द्वारा भारत को लूटने की सुनियोजित रणनीति को अनावृत किया गया।
- ब्रिटिश आर्थिक नीति के अंतर्गत प्रारंभिक राष्ट्रवादी नेताओं ने अंग्रेज़ों द्वारा भारत से किये जा रहे धन के बहिर्गमन को स्पष्ट किया तथा इस अन्यायपूर्ण नीति के विरुद्ध भारत के जनमानस को जागरुक किया। कॉन्ग्रेस की स्थापना के आरंभिक दौर में उदारवादी नेताओं द्वारा अंग्रेज़ों के आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाकर भारतीय अर्थव्यवस्था को उपनिवेशी दासता से विमुक्त करने की मांग को प्रस्तुत किया गया।
- ब्रिटिश साम्राज्यवादी एवं शोषणकारी आर्थिक नीतियों के कारण भारत में दरिद्रता बढ़ी, परिणामस्वरूप भारत में पूंजी का संचय एवं निर्माण नहीं हो पाया। भारत की बढ़ती निर्धनता ने ब्रिटिशों की शोषणकारी आर्थिक नीतियों को राष्ट्रीय मुद्दा बना दिया तथा उपनिवेशी शासन को भारत की गरीबी के कारण के रूप में प्रस्तुत किया गया।

- इस प्रकार ब्रिटिश शासन में पड़ने वाले कई अकाल महामारी के रूप में मौजूद रहे। आयोग एवं संहिताएँ बनने के पश्चात् भी अकालों में निरंतरता रही। इससे जनता को अत्यधिक नुकसान झेलना पड़ा, जो कि ब्रिटिश कालीन अकाल नीतियों की असफलताओं एवं कमियों को दर्शाता है।

भारत में बैंकिंग प्रणाली (Banking System in India)

- सन् 1770 में यूरोपीय बैंकिंग प्रणाली पर आधारित देश में पहला बैंक एलक्जेंडर एंड कंपनी द्वारा कलकत्ता में बैंक ऑफ हिंदुस्तान के नाम से प्रारंभ किया गया था, किंतु यह सफल न हो सका।
- प्रथम बैंक 'जनरल बैंक ऑफ इंडिया' था। सन् 1784 तक बंगाल बैंक की चर्चा होने लगी। सन् 1786 में जनरल बैंक की स्थापना हुई। 1806 ई. में बंगाल बैंक का पतन हो गया और इसकी जगह 1806 ई. में ही बैंक ऑफ बंगाल की स्थापना हुई। यह प्रथम प्रेसीडेंसी बैंक के रूप में जाना जाता है। 1840 ई. में बैंक ऑफ बॉम्बे (द्वितीय प्रेसीडेंसी बैंक) की स्थापना हुई। 1843 ई. में बैंक ऑफ मद्रास (तृतीय प्रेसीडेंसी बैंक) की स्थापना हुई। 1865 ई. में इलाहाबाद बैंक की स्थापना हुई।
- 1921 ई. में तीनों प्रेसीडेंसी बैंकों को मिलाकर इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गई। 1 जुलाई, 1955 को इंपीरियल बैंक (Imperial Bank) का आंशिक राष्ट्रीयकरण कर उसका नाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया कर दिया गया। गोरेवाला समिति की अनुशंसा पर इसका राष्ट्रीयकरण किया गया था। इसका केंद्रीय कार्यालय बंबई में स्थित है।
- 1860 के दशक में पहली बार सीमित उत्तरदायित्व की अवधारणा का विकास हुआ। इस अवधारणा पर स्थापित प्रथम बैंक 1881 ई. में अवध कॉमर्शियल बैंक था। किंतु, संयुक्त पूंजी पर आधारित आधुनिक भारतीय बैंक की स्थापना 1894 ई. में पंजाब नेशनल बैंक के नाम से हुई। इसकी स्थापना लाला हरकिशन लाल द्वारा की गई। इस तरह यह पूर्ण रूप से पहला भारतीय बैंक था।
- 1901 ई. में लाला हरकिशन ने पीपुल्स बैंक (People's Bank) की स्थापना की।
- 1935 ई. के भारत शासन अधिनियम के तहत् एक संघीय बैंक की स्थापना की बात कही गई थी। इसी के आधार पर आर.बी.आई. की स्थापना हुई थी।
- 1 अप्रैल, 1935 को 5 करोड़ रुपए की अधिकृत पूंजी के साथ भारत के केंद्रीय बैंक के रूप में भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना की गई। 1 जनवरी, 1949 को आर.बी.आई. (RBI) का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। उसका मुख्यालय बंबई में स्थित है।
- रिज़र्व बैंक का मुख्य कार्य– नोटों का निर्गमन, सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करना, बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना, साख नियंत्रण तथा विदेशी विनियम कर नियंत्रण करना है।

भारत में बैंकिंग प्रणाली			
1770 ई.	बैंक ऑफ हिंदुस्तान – देश का पहला बैंक।	**1894 ई.**	पंजाब नेशनल बैंक की स्थापना।
1806 ई.	बैंक ऑफ बंगाल की स्थापना।	**1921 ई.**	इंपीरिअल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना।
1840 ई.	बैंक ऑफ बॉम्बे की स्थापना।	**1935 ई.**	रिज़र्व बैक ऑफ इंडिया की स्थापना।
1843 ई.	बैंक ऑफ मद्रास की स्थापना।	**1955 ई.**	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना।

❑❑❑

इकाई

6

ब्रिटिश प्रशासनिक नीति (क)
(British Administrative Policy)

- ब्रिटिशकालीन प्रशासनिक व्यवस्था का विकास
  - ➤ लोक (सिविल) सेवाओं का विकास
  - ➤ पुलिस प्रशासन
  - ➤ सैन्य व्यवस्था
  - ➤ ब्रिटिशकालीन न्यायिक व्यवस्था का विकास
  - ➤ वारेन हेस्टिंग्स के अधीन सुधार
  - ➤ कार्नवालिस के अधीन न्यायिक सुधार
  - ➤ विलियम बैंटिक के अधीन न्यायिक सुधार
  - ➤ क्राउन के अधीन न्यायिक विकास

ब्रिटिशकालीन प्रशासनिक व्यवस्था का विकास
(Development of Administrative System during British Period)

भारतीय प्रशासनिक ढाँचा ब्रिटिश शासन की प्रशासनिक प्रणाली की ही विरासत है। भारतीय प्रशासन के विभिन्न अंग, जैसे– सिविल सेवाएँ, पुलिस व्यवस्था आदि का विकास ईस्ट इंडिया कंपनी के विकास के अनुरूप होता गया तथा सन् 1857 की क्रांति के पश्चात् भी इनमें कई परिवर्तन देखने को मिले।

लोक (सिविल) सेवाओं का विकास (Development of Civil Services)

सिविल सेवा

- **ब्रिटिश साम्राज्य के 'इस्पात का चौखट'**
- **गठन का श्रेय कार्नवालिस (सिविल सेवा का जनक)**
  - **1800 ई. :** लोक सेवकों के प्रशिक्षण हेतु फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना।
  - **1833 का चार्टर एक्ट :** सिविल सेवकों के चयन हेतु योग्यता को आधार माना।
  - **1853 का चार्टर एक्ट :** खुली प्रतिस्पर्धा एवं परीक्षा का सिद्धांत लागू।
  - **सत्येंद्रनाथ टैगोर :** सिविल सेवा (1863 ई.) में सफल होने वाले प्रथम भारतीय।
  - **1922 ई. :** इंग्लैंड व भारत (इलाहाबाद) में परीक्षा का आयोजन एक साथ शुरू।
  - **1926 ई. :** लोक सेवा आयोग की स्थापना।

- एचिसन कमेटी (1886 ई.) ने निम्न सिफारिशें प्रस्तुत की–
  - ➤ सिविल सेवाओं को 3 भागों में वर्गीकृत किया जाए:
  1. सिविल सेवा (प्रवेश परीक्षा इंग्लैंड में आयोजित)
  2. प्रांतीय सिविल सेवा (प्रवेश परीक्षा भारत में आयोजित)
  3. अधीनस्थ सिविल सेवा (प्रवेश परीक्षा भारत में आयोजित)
  - ➤ सिविल सेवाओं में आयु सीमा को बढ़ाकर 23 वर्ष कर दिया जाए।
- ध्यातव्य है कि 1893 ई. में इंग्लैंड के हाउस आफ कॉमंस में पारित प्रस्ताव के आधार पर सिविल सेवाओं के लिये प्रवेश परीक्षा का आयोजन क्रमशः इंग्लैंड एवं भारत दोनों स्थानों पर किया जाएगा, किंतु यह प्रस्ताव कार्यान्वित नहीं हो सका।
- 1912 ई. में सिविल सेवाओं से संदर्भित प्रश्नों पर विचार करने के लिये **इसलिंग्टन आयोग** का गठन किया गया। इस आयोग ने 1917 ई. में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसकी सिफारिशों को 1919 ई. के भारत शासन अधिनियम में शामिल किया गया।
- मॉण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार के अंतर्गत सिविल सेवा परीक्षा भारत में करवाने की लंबे समय से चली आ रही मांग को स्वीकार कर लिया गया।
- सन् 1922 से भारतीय सिविल सेवा परीक्षा लंदन के साथ-साथ भारत में भी आयोजित की जाने लगी।
- लोक सेवा में सुधार के लिये पुनः 1923 ई. में लॉर्ड ली की अध्यक्षता में एक रॉयल कमीशन का गठन किया गया, जिसे 'ली आयोग' के रूप में जाना जाता है। इसने मार्च 1924 ई. में अपनी रिपोर्ट में भारत सरकार अधि नियम, 1919 के तहत् लोक सेवा आयोग की स्थापना का सुझाव दिया।
- ली आयोग की सिफारिश पर 1926 ई. में लोक सेवा आयोग का गठन किया गया।
- 1935 ई. के भारत शासन अधिनियम के तहत् केंद्रीय स्तर पर एक अखिल भारतीय सेवा तथा राज्यों/प्रांतों के लिये प्रांतीय लोक सेवा आयोगों की स्थापना का प्रावधान किया गया।
- 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान के लागू होने पर नागरिक/सिविल सेवा को बनाए रखा गया तथा सिविल सेवकों की भर्ती एवं योग्यताओं के निर्धारण के लिये एक संवैधानिक संस्था संघ लोक सेवा आयोग का गठन किया गया।

सिविल सेवा संबंधी प्रमुख आयोग			
वर्ष	**आयोग**	**सिफारिश**	**गवर्नर जनरल**
1886 ई.	एचिंसन आयोग	सिविल सेवा को दो भागो में विभक्त	लॉर्ड डफरिन
1992 ई.	इस्लिंगटन आयोग	भारतीयों के लिये 25% पद सुरक्षित हों	लॉर्ड हार्डिंग द्वितीय
1923 ई.	ली आयोग	लोक सेवा आयोग का गठन	लॉर्ड रीडिंग
भारत शासन अधिनियम, 1935 : संघ लोक सेवा आयोग का गठन			

पुलिस प्रशासन (Police Administration)

- भारत में अंग्रेज़ी कंपनी का मुख्य उद्देश्य औपनिवेशिक शासन को सुदृढ़ एवं लाभप्रद स्थिति में स्थापित करना था, जिसके लिये एक मज़बूत पुलिस तंत्र की आवश्यकता थी।

- दीवानी मामलों की सुनवाई हिंदू व मुस्लिम विधियों के अनुसार होती थी, जबकि फौजदारी मामलों की सुनवाई केवल मुस्लिम कानूनों के आधार पर होती थी।
- रेग्युलेटिंग एक्ट, 1773 ई. के द्वारा कलकत्ता में सुप्रीम कोर्ट की स्थापना हुई। इससे बंगाल में न्याय की दोहरी व्यवस्था लागू हुई, परिणामस्वरूप सुप्रीम कोर्ट और सदर अदालतों के बीच क्षेत्राधिकार को लेकर टकराव होने लगा।

कार्नवालिस के अधीन न्यायिक सुधार (Judicial Reforms under Cornwallis)

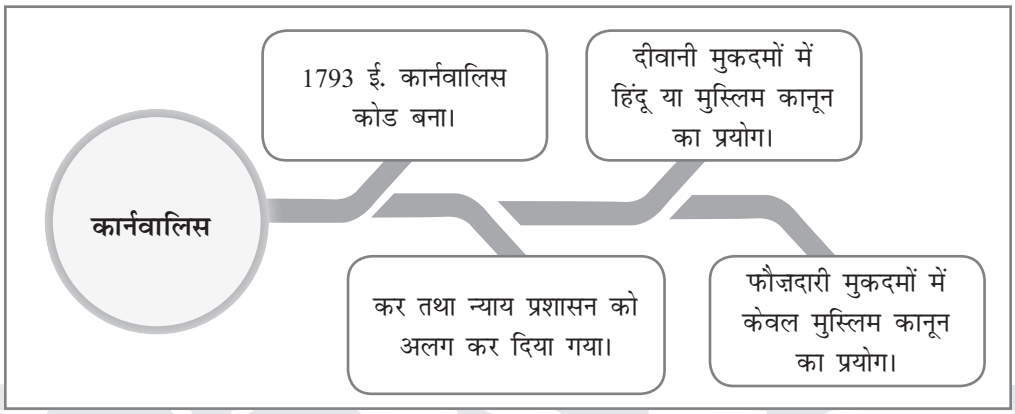

- लॉर्ड कार्नवालिस ने वारेन हेस्टिंग्स द्वारा स्थापित न्यायिक संरचना को अधिक व्यवस्थित कर भारत में एक सुदृढ़ न्याय प्रणाली की नींव डाली।
- न्यायालय एवं प्रशासन का पृथक्करण करने की दिशा में ठोस प्रयास करते हुए कार्नवालिस ने न्यायपालिका को 'पदसोपानिक क्रम' में व्यवस्थित करके संपूर्ण ब्रिटिश शासित प्रदेशों में एकरूपता स्थापित की।
- अपने कार्यकाल (1786-93 ई.) में कार्नवालिस ने प्रत्येक ज़िले के मुख्य कस्बे में रजिस्ट्रार, अमीन व मुंसिफ की अदालतों का गठन किया। इनके ऊपर ज़िला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता वाली ज़िला अदालत थी, जिसके निर्णयों के विरुद्ध अपील के लिये प्रांतीय अदालतें स्थापित की गई थीं। प्रांतीय अदालतों के ऊपर गवर्नर जनरल की अध्यक्षता में सदर दीवानी अदालत थी, जिसके निर्णयों के विरुद्ध अपील लंदन स्थित प्रिवी काउंसिल (Privy Council) में की जा सकती थी।

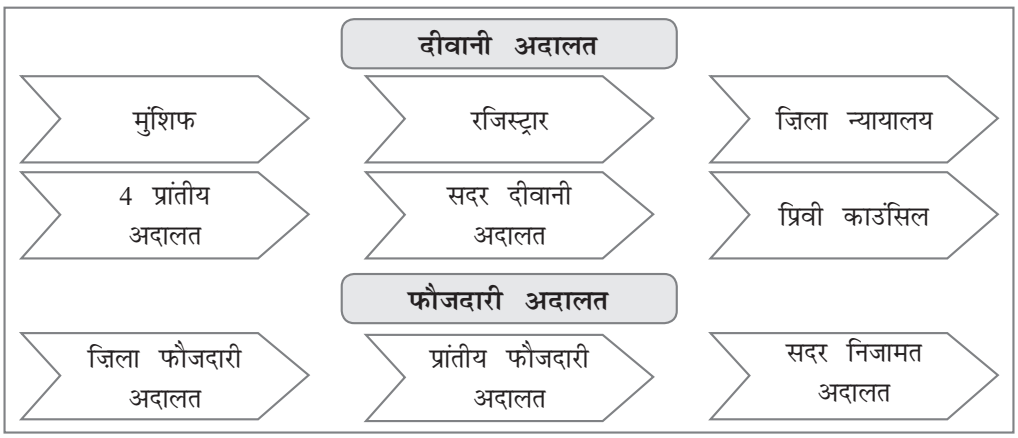

इकाई

6

ब्रिटिश प्रशासनिक नीति (ख)
(British Administrative Policy)

- देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति
  - ➤ भूमिका
  - ➤ घेरे की नीति
  - ➤ अधीनस्थ पार्थक्य की नीति
  - ➤ अधीनस्थ संघ की नीति
  - ➤ समान संघ की नीति
  - ➤ मूल्यांकन
- ब्रिटिशकालीन स्थानीय स्वशासन
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ लॉर्ड मेयो के काल में स्थानीय स्वशासन
  - ➤ लॉर्ड रिपन के काल में स्थानीय स्वशासन
  - ➤ प्रस्ताव के प्रमुख बिंदु
  - ➤ विकेंद्रीकरण आयोग की रिपोर्ट, 1908
  - ➤ भारत सरकार अधिनियम, 1919 के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन
  - ➤ भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन
  - ➤ स्थानीय स्वशासन का विकास
  - ➤ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थानीय स्वशासन
- ब्रिटिशकालीन विदेश नीति
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ ब्रिटिशकालीन विदेश नीति के लक्षण
  - ➤ ब्रिटिश भारत का सीमावर्ती देशों के साथ संबंध
    - ■ आंग्ल-नेपाल संबंध
    - ■ आंग्ल-बर्मा संबंध
    - ■ आंग्ल-अफगान संबंध
    - ■ आंग्ल-तिब्बत संबंध

देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति (British Policy against Princely States)

भूमिका (Introduction)

- भारत में 562 रियासतों के अधीन लगभग 7,12,508 वर्ग मील का क्षेत्र था। 1740 ई. से पूर्व ब्रिटिश कंपनी राजनीतिक आकांक्षाओं से रहित एक व्यापारिक कंपनी थी। 1751 ई. में क्लाइव द्वारा अर्काट पर घेरा डालना कंपनी द्वारा भारत में राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करने का प्रथम प्रयास था।
- प्लासी के युद्ध के पश्चात् एक शताब्दी से भी कम समय में भारत की देशी रियासतों पर ब्रिटिश कंपनी का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अधिकार हो गया था। देशी रियासतों को ब्रिटिश शासन के अधीन करने के संदर्भ में कोई निश्चित नीति नहीं थी।
- ध्यातव्य है कि इन्हीं ब्रिटिश नीतियों में समय व परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन होता रहा, जिसे विलियम ली वार्नर ने अपनी पुस्तक 'द नेटिव स्टेट्स ऑफ इंडिया' (The Native States of India) में देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति को तीन चरणों में विभक्त किया है तथा कुछ विद्वानों ने देशी रियासतों के प्रति चौथी ब्रिटिश नीति को भी बताया है, जो निम्नलिखित हैं–

1. घेरे की नीति (1765-1813 ई.)
2. अधीनस्थ पार्थक्य की नीति (1813-1858 ई.)
3. अधीनस्थ संघ की नीति (1858-1935 ई.)
4. समान संघ की नीति (1935-1947 ई.)

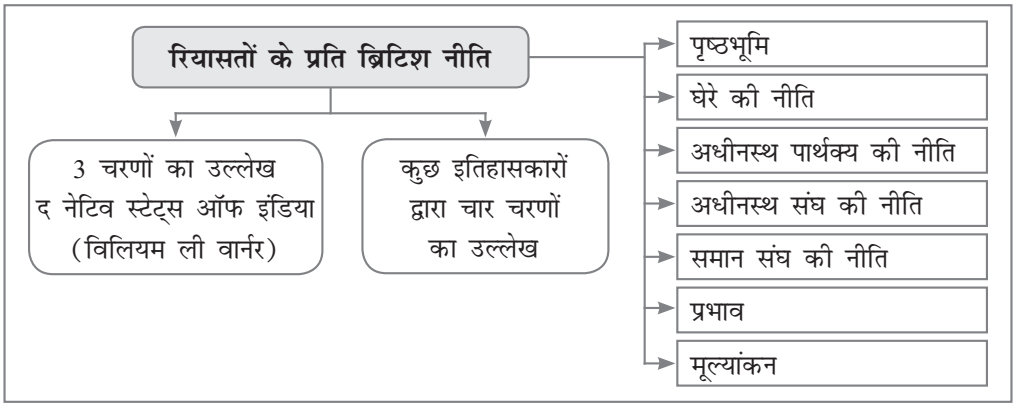

घेरे की नीति (The Policy of Ring Fence), 1765-1813 ई.

- भारत में ब्रिटिश शासन के आरंभिक दौर में अंग्रेज़ों की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं के होते हुए भी देशी रियासतों के प्रति अहस्तक्षेप की नीति अपनाई गई थी, क्योंकि इस दौरान अंग्रेज़ों का उद्देश्य भारत में नवविजित राज्यों को ब्रिटिश शासन में सुरक्षित बनाए रखना था। उदाहरणत: बंगाल को सुरक्षित रखने हेतु अवध के साथ सहायक संधि की गई, ताकि बफर राज्य के माध्यम से मराठा आक्रमण से बंगाल को सुरक्षित किया जा सके। इस प्रकार, घेरे या अहस्तक्षेप की नीति के माध्यम से जीते गए प्रदेशों के पास बफर राज्य की स्थापना की जाती थी।
- घेरे की नीति एक लचीली व्यवस्था थी, जो समय और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित भी होती रही। वारेन हेस्टिंग्स के काल में अवध के मामले में हस्तक्षेप, रूहेला युद्ध, मराठा युद्ध तथा द्वितीय आंग्ल-मैसूर युद्ध आदि ने अहस्तक्षेप के सिद्धांत से विचलन को प्रदर्शित किया।
- इसी प्रकार लॉर्ड कार्नवालिस ने टीपू सुल्तान के विरुद्ध तृतीय आंग्ल-मैसूर युद्ध लड़कर अहस्तक्षेप की नीति को त्याग दिया। इसके पश्चात् वेलेज़ली ने भी मराठों के मामले में हस्तक्षेप करके अहस्तक्षेप की नीति का उल्लंघन किया।
- वहीं दूसरी तरफ, वेलेज़ली ने सहायक संधि के रूप में साम्राज्यवादी नीति का पालन किया, जो घेरे की नीति का ही विस्तार था। इस नीति के माध्यम से भी देशी रियासतों के साथ संधि करके उन्हें बफर राज्य में बदलने की रणनीति पर काम किया गया।

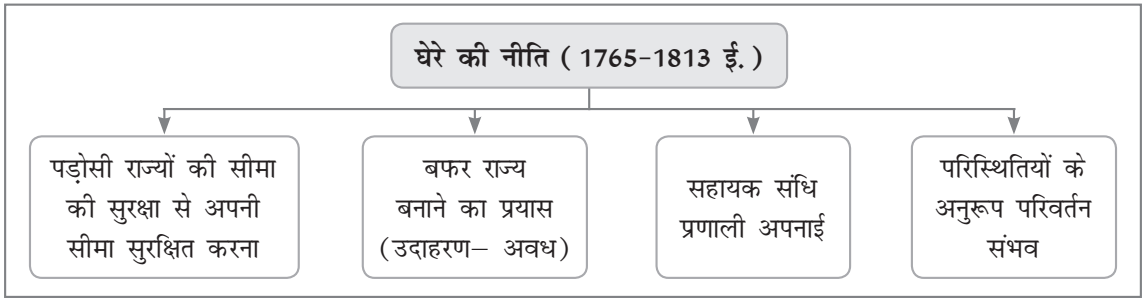

इकाई

7

ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ
(British Socio-Cultural Policies)

- पृष्ठभूमि
  - प्रथम चरण, 1772-1813 ई.
  - द्वितीय चरण, 1813-1857 ई.
  - तृतीय चरण, 1857-1885 ई.
  - चतुर्थ चरण, 1885 ई. के बाद
- ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों का प्रभाव
- शिक्षा नीति
  - पृष्ठभूमि
  - भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रसार के कारण
  - ईसाई मिशनरियों के आरंभिक प्रयास
  - प्राच्यवादी तथा पाश्चात्यवादी विवाद
  - मैकाले का स्मरण-पत्र
  - वुड का घोषणा पत्र, 1854 ई.
  - हंटर शिक्षा आयोग, 1882-83 ई.
  - भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 1904 ई.
  - शिक्षा नीति पर सरकारी प्रस्ताव, 1913 ई.
  - सैडलर विश्वविद्यालय आयोग, 1917-19 ई.
  - हार्टोग समिति, 1929 ई.
  - वर्धा मूल शिक्षा योजना, 1937 ई.
  - सार्जेंट योजना, 1944 ई.
  - राधाकृष्णन आयोग, 1948-49 ई.
  - कोठारी शिक्षा आयोग, 1964-66 ई.
  - राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 ई.
  - पाश्चात्य शिक्षा का भारत पर प्रभाव
  - ब्रिटिशकालीन शिक्षा एवं राष्ट्रवाद का उदय
- भारत में प्रेस का विकास
  - पृष्ठभूमि
  - समाचार-पत्रों का विकास
  - प्रेस से संबंधित अधिनियम
  - प्रेस नियंत्रण अधिनियम
  - द लाइसेंसिंग रेगुलेशन एक्ट
  - लिबरेशन ऑफ द इंडियन प्रेस एक्ट (मेटकॉफ अधिनियम), 1835
  - 1857 ई. का अनुज्ञप्ति अधिनियम
  - पंजीकरण अधिनियम, 1867
  - वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट, 1878
  - आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1898
  - समाचार-पत्र अधिनियम, 1908
  - भारतीय प्रेस अधिनियम,1910
  - भारतीय प्रेस (संकटकालीन शक्तियाँ) अधिनियम, 1931
  - समाचार-पत्र जाँच समिति, 1947
  - प्रेस आयोग
  - समाचार-पत्रों की भूमिका एवं प्रभाव

पृष्ठभूमि (Background)

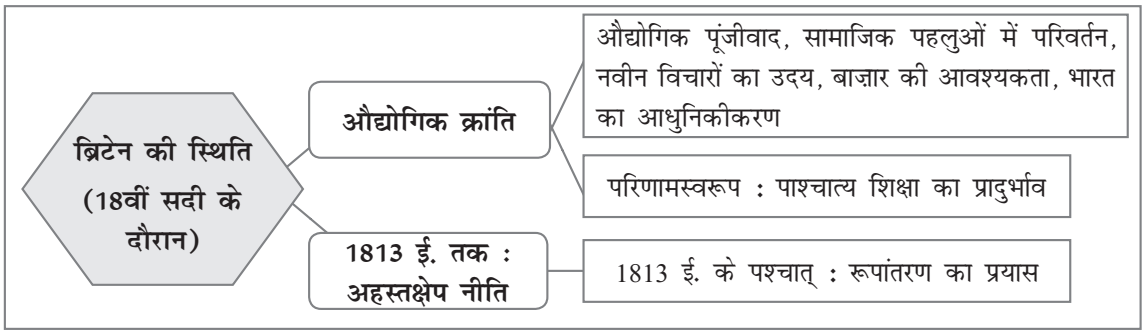

- ब्रिटिश भारत में साम्राज्य विस्तार के क्रम में जब भारतीय अर्थव्यवस्था एवं प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित हो रहा था, तब ब्रिटिश सरकार के समक्ष एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि भारतीय समाज और संस्कृति के प्रति ब्रिटिश नीति कैसी होनी चाहिये? अतएव ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय समाज की परंपराओं, विधानों एवं संस्कृति के प्रति एक सक्रिय नीति का विकास हुआ, जिसे साम्राज्यवादी या औपनिवेशिक सामाजिक-सांस्कृतिक नीति कहते हैं।
- यद्यपि ब्रिटिशों द्वारा अपनाई गईं सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ समय के अनुरूप परिवर्तनशील रहीं, तथापि इनका एकमात्र लक्ष्य ब्रिटिश हितों से संलग्नता था।
- इस प्रकार, ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों के परिवर्तनशील स्वरूप के अनुसार इन्हें चार चरणों में विभक्त किया जा सकता है–

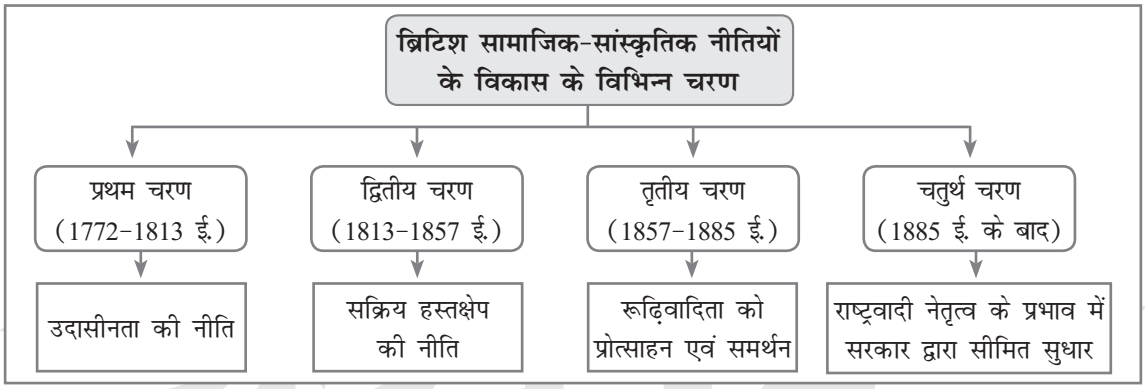

प्रथम चरण (First Phase), 1772-1813 ई.

- कंपनी शासन के इस चरण में ब्रिटिश साम्राज्य का क्षेत्रीय विस्तार हो रहा था, इस दौरान ब्रिटिश सरकार ने अपनी साम्राज्यवादी रणनीतियों को ध्यान में रखते हुए भारतीयों के सामाजिक-सांस्कृतिक मामलों के प्रति अति उदासीन एवं अहस्तक्षेप की नीति अपनाई।
- कंपनी शासन की इस उदासीनता का मुख्य कारण, कंपनी का अपने व्यावसायिक हितों पर केंद्रित रहना था। साथ ही, भारत की धर्म-संस्कृति एवं प्रथा-परंपराएँ भारतीय जनमानस के लिये जीने-मरने का प्रश्न थीं, अतः इनमें हस्तक्षेप करके कंपनी अपने लिये खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी।
- उपर्युक्त विचारों के बावजूद ब्रिटिशों द्वारा कुछ प्रयास किये गए, जिनमें बंगाल अधिनियम, 1795 की धारा 21 तथा 1804 के अधिनियम की धारा 3 द्वारा शिशु-वध को प्रतिबंधित करना तथा रेगुलेशन धारा 1811(X) द्वारा दास-प्रथा का उन्मूलन शामिल थे, किंतु ये प्रयास ज़मीनी स्तर पर पूरी तरह असफल सिद्ध हुए, क्योंकि ब्रिटिशों के इन प्रयासों में दृढ़ता से अनुपालन करवाने की इच्छाशक्ति का पूर्णतया अभाव था।

इस दौरान अनेक पाश्चात्य बुद्धिजीवियों ने भारतीय धर्मग्रंथों एवं साहित्य के अध्ययन पर बल दिया तथा भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के ताने-बाने को समझने हेतु 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल' की स्थापना जैसे संस्थागत प्रयास किये गए।

द्वितीय चरण (Second Phase), 1813-1857 ई.

- इस अवधि में ब्रिटिश कंपनी ने पूर्ववर्ती अहस्तक्षेप की नीति का परित्याग करते हुए भारतीय समाज-संस्कृति से जुड़े मुद्दों पर 'सक्रिय हस्तक्षेप की नीति' को प्रोत्साहन देना शुरू किया।

हार्टोग समिति	1929 ई.	लॉर्ड इरविन	ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों को औद्योगिक शिक्षा देना
वर्धा मूल शिक्षा योजना	1937 ई.	लॉर्ड लिनलिथगो	हस्तनिर्मित वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ावा देना
सार्जेंट योजना	1944 ई.	लॉर्ड वेवेल	6 से 11 वर्ष तक के बच्चों के लिये अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा

वुड का घोषणा पत्र (Wood's Despatch), 1854 ई.

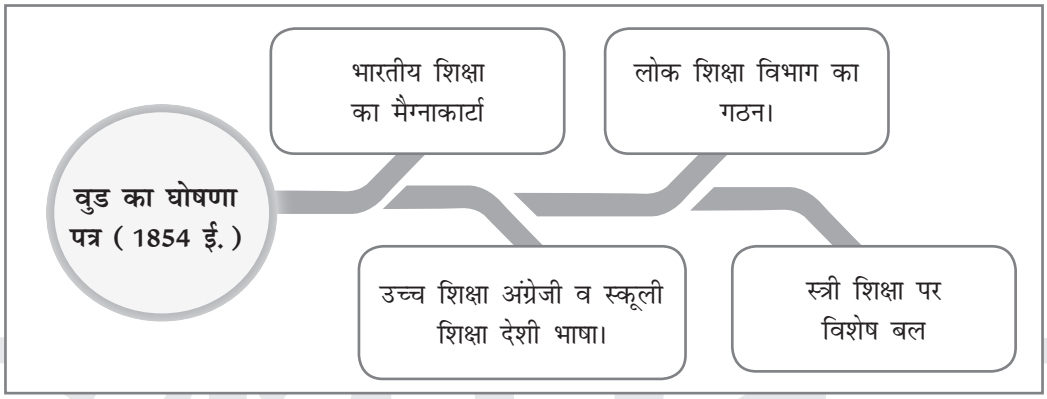

- 1854 ई. में भारतीय शिक्षा पर बोर्ड ऑफ कंट्रोल के प्रधान चार्ल्स वुड द्वारा एक व्यापक योजना प्रस्तुत की गई, जिसे वुड डिस्पैच के नाम से जाना गया। इस घोषणा पत्र को 'भारतीय शिक्षा का मैग्नाकार्टा' कहा जाता है।
- वुड डिस्पैच के प्रमुख प्रस्ताव निम्नलिखित थे–
  - उच्च शिक्षा का सबसे उचित माध्यम अंग्रेज़ी को माना जाए एवं आम जनमानस की शिक्षा का माध्यम देशी भाषा में निर्धारित किया जाए।
  - ग्रामीण स्तर पर देशी भाषा के विद्यालय एवं ज़िला स्तर पर एंग्लो वनक्युलर हाईस्कूल व कॉलेज स्थापित किये जाएँ।
  - शिक्षा क्षेत्र में निजी उद्यमों को प्रोत्साहन देने के लिये अनुदान सहायता प्रदान किया जाए।
  - तकनीकी विद्यालय और महाविद्यालय स्थापित किये जाएँ।
  - पाश्चात्य शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया जाए।
  - कलकत्ता, बंबई एवं मद्रास में लंदन विश्वविद्यालय के अनुरूप विश्वविद्यालय स्थापित किये जाएँ।
  - स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए।
  - अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की जाए।
  - प्रत्येक प्रांत में शिक्षा विभाग की स्थापना की जाए।
- 1855 ई. में वुड डिस्पैच के सुझाव पर ही पाँच प्रांतों (बंगाल, बंबई, पंजाब, मद्रास एवं उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत) में लोक शिक्षा विभाग स्थापित किये गए तथा 1857 ई. में कलकत्ता, बंबई एवं मद्रास विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। इस प्रकार वुड का घोषणा पत्र विश्वविद्यालय-स्तरीय शिक्षा से संबंधित था।

इकाई

8

भारतीय प्रतिक्रिया (अ)
(Indian response)

जनजातीय विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- जनजातीय विद्रोह के प्रमुख कारण
- प्रमुख जनजातीय विद्रोह
- जनजातीय विद्रोह का स्वरूप
- जनजातीय विद्रोह की सीमाएँ

कृषक विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- कृषक विद्रोह के प्रमुख कारण
- कृषक विद्रोह के विभिन्न चरण
- कृषक आंदोलनों का स्वरूप
  - 19 वीं सदी के कृषक विद्रोह का स्वरूप
  - 20 वीं सदी के किसान आंदोलनों का स्वरूप
- किसान आंदोलनों की उपलब्धियाँ

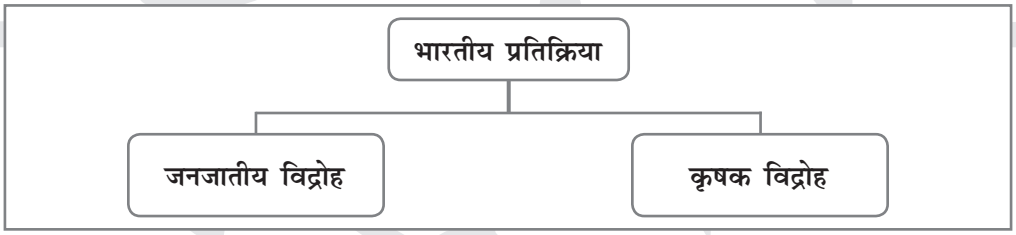

जनजातीय विद्रोह (Tribal Revolt)

पृष्ठभूमि (Background)

- भारत के विभिन्न भागों में बसने वाले जनजातीय समूहों ने ब्रिटिश शासन के दौरान अनेक बार सशस्त्र संघर्ष किया। इन विद्रोहों में उन्होंने अत्यंत जुझारू संघर्ष करते हुए असीम शौर्य व बलिदान का परिचय दिया। परंतु, दूसरी ओर सरकार ने इन विद्रोहों को समाप्त करने के क्रम में क्रूरता की सारी सीमाएँ तोड़ दीं और बर्बरतापूर्वक इनका दमन कर दिया।
- आमतौर पर आदिवासी शेष समाज से अपने-आप को पृथक् रखते थे, लेकिन ब्रिटिश सरकार ने उनको पूरी तरह से अपनी औपनिवेशिक नीति में शामिल करते हुए उनकी विशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया, परिणामस्वरूप जनजातियों द्वारा औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध जनजातीय आंदोलन का आरंभ हो गया। इनका चरित्र अन्य सामुदायिक आंदोलनों से भिन्न, एकांकी और हिंसक था।
- इस प्रकार, ब्रिटिश सेना और जनजातियों के बीच हुए सशस्त्र विद्रोह पूरी तरह दो गैर-बराबर पक्षों के बीच का संघर्ष था, क्योंकि यहाँ पर एक तरफ तो आधुनिकतम हथियारों एवं प्रशिक्षण से युक्त ब्रिटिश सेना थी और दूसरी

वन-उत्पादों और गाँवों की ज़मीनों के इस्तेमाल हेतु कई प्रकार के प्रतिबंध आरोपित कर दिये। आदिवासियों द्वारा जगह बदलकर की जाने वाली 'झूम खेती' पर तो सरकार ने पूर्णत: प्रतिबंध लगा दिया। इस प्रकार, ब्रिटिश सरकार के नए वन कानून से आदिवासियों में गहरा असंतोष उत्पन्न हुआ, जो कि संघर्ष का एक प्रमुख कारण बना।

5. **नवीन प्रशासनिक संरचना (New Administration Structure):** सामरिक एवं कर जरूरतों की पूर्ति के चलते ब्रिटिशों ने आदिवासी क्षेत्रों में पुलिस थाने एवं सैनिक छावनियों को स्थापित कर कंपनी के कानूनों को लागू किया। वस्तुत: आदिवासी शेष समाज से अलग-थलग रहते हुए स्वतंत्र-जीवन पद्धति के अभ्यस्त थे। किंतु, कंपनी द्वारा इन क्षेत्रों की पूर्णतया औपनिवेशिक दायरे में लिये जाने पर इनकी स्वतंत्रता बाधित हुई और वे विद्रोह की ओर उन्मुख हुए।

6. **धार्मिक आदिवासी नेताओं का प्रभाव (Impact of Religious Tribal Leaders):** आदिवासियों के कई विद्रोहों को आकार देने में धार्मिक नेताओं (जैसे– ओझा, मसीहा आदि) ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने आदिवासियों को भरोसा दिलाया कि ईश्वर उनके साथ है, वही कष्टों को दूर करेगा और बाहरी लोगों के अत्याचारों से मुक्ति दिलाएगा। ज़्यादातर नेताओं का दावा था कि उनके पास जादुई ताकत है, जिससे वे दुश्मनों की गोलियों को भी बेअसर कर सकते हैं। इससे आदिवासियों में उम्मीद और विश्वास की ऐसी लहर दौड़ी कि वे अंतिम सांस तक अपने नेता/मसीहा के साथ लड़ने को तैयार हो गए।

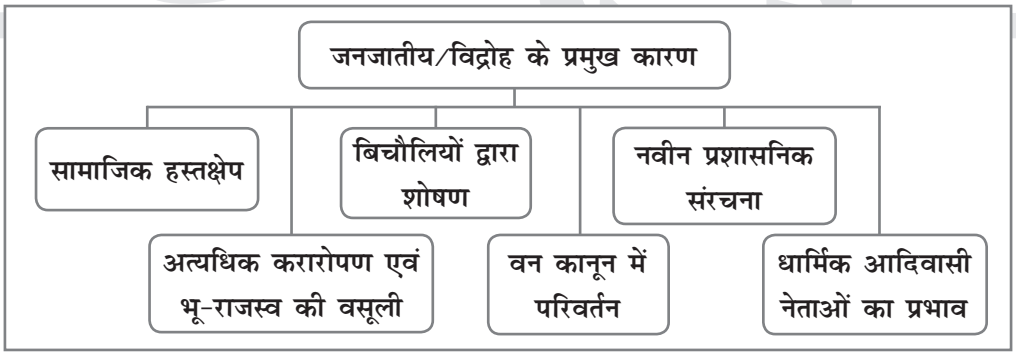

प्रमुख जनजातीय विद्रोह (Major Tribal Revolts)

पहाड़िया विद्रोह (Paharia Revolt) 1772-80 ई.

- यह विद्रोह 1770 के दशक में राजमहल के पहाड़ी क्षेत्रों में स्थित जनजातियों द्वारा ब्रिटिश भू-राजस्व व्यवस्था के विरोध में हुआ।
- आदिवासियों द्वारा छापामार संघर्ष की कड़ी चुनौतियों से परेशान होकर अंग्रेज़ी सरकार ने 1778 ई. में समझौता करके इस क्षेत्र को 'दामिन-ए-कोह' क्षेत्र अर्थात् पूरे क्षेत्र को सरकारी संपत्ति घोषित कर दिया।

चुआर विद्रोह (Chuar Revolt) 1768-99 ई.

- पश्चिम बंगाल के मिदनापुर ज़िले की आदिम जाति के चुआर लोगों ने 1768 ई. में अकाल तथा बढ़े हुए भूमि कर से उपजे आर्थिक संकटों के कारण विद्रोह कर दिया।

प्रांतों में कृषक आंदोलन (Peasant Movement in the Provinces)			
प्रांत एवं प्रभावित क्षेत्र	**नेतृत्व**	**कारण**	**प्रमुख तथ्य**
बिहार में किसान आंदोलन (1929-39 ई.)	स्वामी सहजानंद, कार्यानंद शर्मा, राहुल सांकृत्यायन	ज़मींदारों का शोषण, अवैध वसूली, काश्तकारों की बेदखली	सन् 1929 में स्वामी सहजानंद ने बिहार किसान सभा का गठन किया। कार्यानंद शर्मा ने मुंगेर ज़िले के बड़हिया टाल में बकाश्त भूमि (स्वयं जोती गई भूमि) की वापसी के लिये आंदोलन चलाया। इसी प्रकार अन्य जगहों में कई नेताओं द्वारा कृषक आंदोलन चलाए गए। सन् 1938-39 तक सरकार के कुछ सुधारों के बाद आंदोलन क्रमशः शांत हो गया।
पंजाब में किसान आंदोलन (1930-40 ई.) प्रभावित क्षेत्र– जालंधर, अमृतसर, होशियारपुर एवं शेखपुरा	सोहन सिंह भाखना, बेदी ज्वाला सिंह, तेज सिंह	भू-राजस्व एवं सिंचाई कर में वृद्धि	पंजाब नौजवान भारत सभा, कीर्ति किसान दल व अकाली दल की आंदोलनों में मुख्य भूमिका रही। सन् 1943 में कानून के द्वारा किसानों को उनकी ज़मीनें वापस मिलीं।
आंध्र प्रदेश (1930 ई. के दशक)	एन.जी. रंगा, पी.सी. जोशी	ज़मींदारों की शोषणकारी नीतियाँ	1933 ई. में एन.जी. रंगा ने 'भारतीय कृषक संस्थान' की स्थापना की। आंध्र प्रदेश के कृषक आंदोलनों की एक उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि वामपंथी नेता कृषकों को प्रशिक्षित करने के लिये 'ग्रीष्मकालीन स्कूलों' में व्याख्यान देने आते थे, जिसकी व्यवस्था किसानों द्वारा दिये गए चंदों से होती थी।

❑❑❑

इकाई

8

भारतीय प्रतिक्रिया (ब)
(Indian response)

1857 ई. का विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- विद्रोह के कारण
- विद्रोह का स्वरूप
- विद्रोह का आरंभ एवं प्रसार
- विद्रोह के प्रमुख केंद्र
- विद्रोह का परिणाम एवं प्रभाव
- विद्रोह की विफलता के कारण

श्रमिक संघ आंदोलन
- पृष्ठभूमि
- श्रमिक संघों के गठन के कारण
- भारत में श्रमिक आंदोलन का आरंभ एवं विकास
- 19वीं सदी में श्रमिक आंदोलन
- 19वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान
- 20वीं सदी में श्रमिक आंदोलन
  - ➤ एटक (AITUC) की स्थापना
  - ➤ मेरठ षड्यंत्र केस
- 20वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान

1857 ई. का विद्रोह (Revolt of 1857)

पृष्ठभूमि (Background)

1757 ई. के प्लासी युद्ध के पश्चात् अंग्रेज़ नीति निर्माता की भूमिका में आ गए, जिनका लक्ष्य ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार और व्यापारिक लाभ कमाना था। भारत में अंग्रेज़ी शासन की स्थापना के साथ ही उसका विरोध शुरू हो गया था। शायद ही कोई ऐसा वर्ष बीता हो, जब देश की जनता ने ब्रिटिश शासन का विरोध नहीं किया हो। बंगाल में संन्यासी विद्रोह, खानदेश (गुजरात) में किसान असंतोष एवं संथाल, कोल, मुंडा, खासी तथा गोंड आदि जनजातीय समूहों ने सशस्त्र विद्रोह द्वारा ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी। हालाँकि, इन विद्रोहों की प्रकृति असंगठित, स्थानीय एवं स्वत:स्फूर्त होने के कारण इनका प्रभाव सीमित रहा, किंतु 1857 ई. में हुए विद्रोह के स्वरूप एवं प्रभाव की व्यापकता ने ब्रिटिश सत्ता की जड़ों को हिलाकर रख दिया।

1857 ई. से पूर्व के प्रमुख सैनिक विद्रोह →
- 1764 ई. : बक्सर विद्रोह (हेक्टर मुनरो)
- 1766 ई. : सैनिक विद्रोह (क्लाइव)
- 1806 ई. : वेल्लौर विद्रोह (सेना में प्रथम धार्मिक विरोध)
- 1824 ई. : बैरकपुर 47वीं रेजिमेंट
- 1825 ई. : असम तोपखाने का विद्रोह
- 1838 ई. : शोलापुर विद्रोह
- 1844 ई. : फिरोजपुर की 34वी एन.आई. एवं 64वीं रेजिमेंट का विद्रोह
- 1849-50 ई. : गोविंदगढ़ विद्रोह

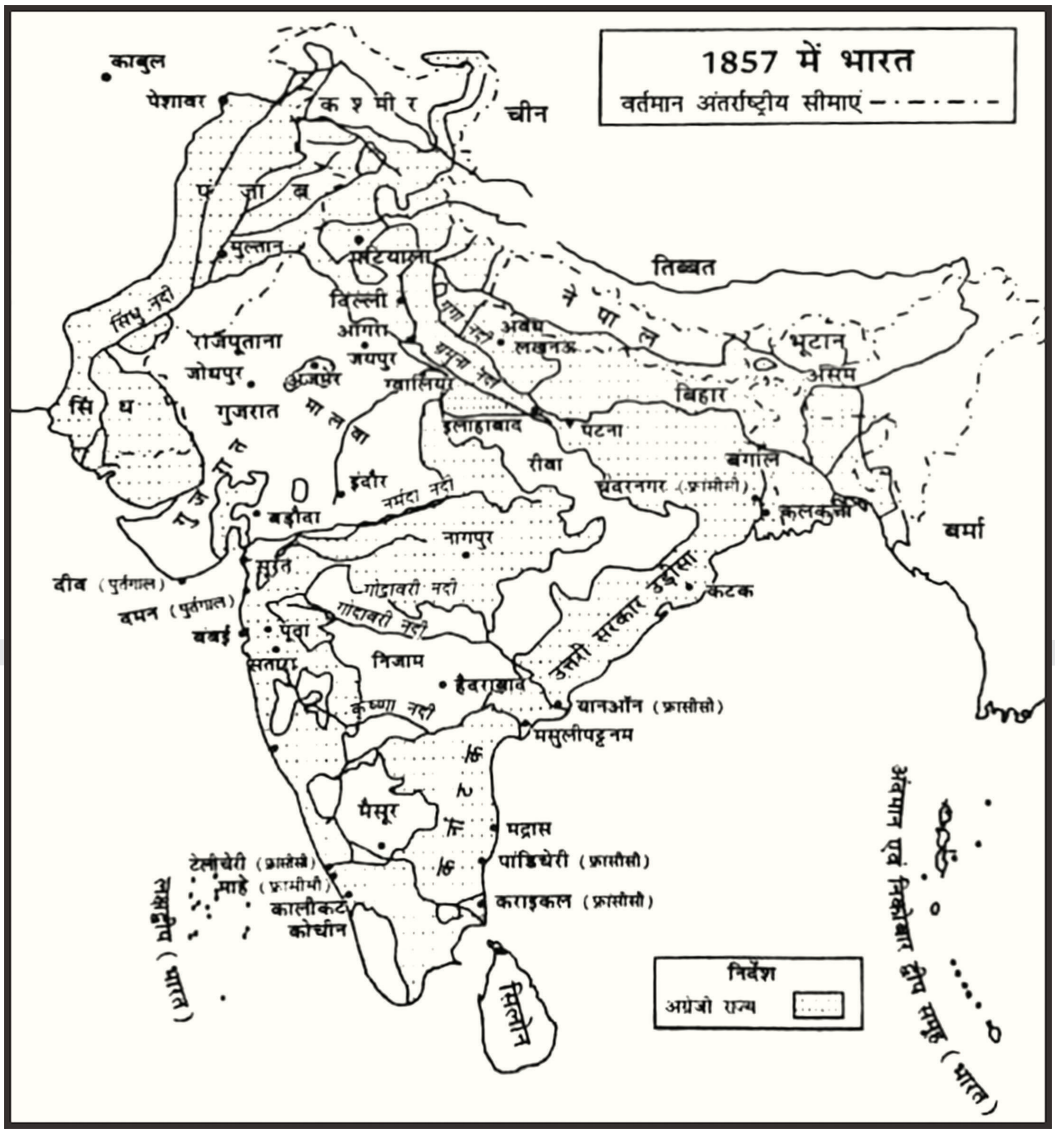

1857 के विद्रोह के समय प्रमुख व्यक्तित्व

- लॉर्ड पामर्स्टन– ब्रिटेन का प्रधानमंत्री
- जॉर्ज एनसन– मुख्य सेनापति
- लॉर्ड कैनिंग– गवर्नर–जनरल (भारत)
- बहादुरशाह ज़फर– भारत का सम्राट

इकाई

9

सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन
(Socio-Religious Reform Movements)

- पृष्ठभूमि
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों का स्वरूप
- समाज सुधारकों द्वारा अपनाए गए प्रमुख साधन
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन का योगदान
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन की सीमाएँ
- 19वीं सदी के प्रमुख सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन
- स्वामी विवेकानंद एवं रामकृष्ण मिशन
- थियोसोफिकल सोसायटी
- मुस्लिम धर्म सुधार आंदोलन
- सिख सुधार आंदोलन
- जाति सुधार आंदोलन
- अन्य प्रमुख आंदोलन
- समाज सुधार के केंद्र में महिलाएँ
- सामाजिक-धार्मिक सुधारों के प्रति कॉन्ग्रेस का दृष्टिकोण

पृष्ठभूमि (Background)

- भारतीय इतिहास में 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध का काल सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के रूप में जाना जाता है।
- ब्रिटिश कंपनी द्वारा शुरू की गई सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक प्रणाली ने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया, जिससे प्राचीन एवं नवीन व्यवस्था के मध्य संघर्ष बढ़ा।
- अंग्रेज़ों द्वारा भारत में किये जा रहे पश्चिमी सांस्कृतिक प्रसार ने भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में परिवर्तन को बढ़ावा दिया, जिसकी परिणति सामाजिक सुधार आंदोलनों के रूप में देखने को मिली।
- 19वीं सदी का भारतीय समाज धार्मिक अंधविश्वासों एवं सामाजिक कुरीतियों से जकड़ा हुआ था। भारत में पाश्चात्य शिक्षा का आरंभ भी इन सुधार आंदोलनों के उदय में सहायक सिद्ध हुआ।
- भारतीय नवशिक्षित वर्ग ने पाश्चात्य लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय के आधारभूत सिद्धांतों के साथ-साथ तर्कवाद, विज्ञानवाद एवं मानवतावादी मूल्यों को अपनाया।
- इस वर्ग ने तत्कालीन भारतीय समाज की कुरीतियों एवं बुराइयों को नष्ट करने, अतीत के गौरवशाली इतिहास का बोध कराने एवं उसकी पुनर्व्याख्या करने हेतु प्रेरित किया।।

सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण (Couses for the Rise of Socio-Religious Reform Movements)

औपनिवेशिक सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था (Colonial Social, Economic and Administrative System)

- ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में आमूल-चूल परिवर्तन हुए।

- इन्होंने विद्यालयों के लिये व्यावसायिक शिक्षा की वकालत की।
- इनके द्वारा 1916 ई. में बंबई में प्रथम महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की गई।

विष्णु शास्त्री पंडित (Vishnu Shastri Pandit)

- महाराष्ट्र के प्रसिद्ध समाज सुधारक विष्णु शास्त्री पंडित का संपूर्ण जीवन विधवाओं के कल्याण के लिये समर्पित रहा।
- इन्होंने महिला सुधारों के संदर्भ में 'विधवा विवाह' नामक पुस्तक का मराठी में अनुवाद किया।
- 1850 ई. में इन्होंने विधवा-पुनर्विवाह सभा की स्थापना की।
- ध्यातव्य है कि महिला समाज सुधारकों की सूची में राजा राममोहन राय एवं ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयास उल्लेखनीय हैं, जिसका विवरण पिछले संदर्भों में प्रस्तुत किया जा चुका है।

सामाजिक-धार्मिक सुधारों के प्रति कॉन्ग्रेस का दृष्टिकोण (Congress' Perspective towards Socio-Religious Reforms)

- कॉन्ग्रेस ने आरंभ में सामाजिक-धार्मिक सुधारों के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया, परंतु गांधीजी के राजनीति में पदार्पण के पश्चात् भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस ने समाज-सुधार की दिशा में अनेक प्रयास किये।
- स्वराज आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय शिक्षा पर बल देते हुए अनेक स्कूल एवं कॉलेज खोले गए।
- गांधीजी के आह्वान पर स्वच्छता, स्वावलंबन एवं स्वदेशी जैसे कार्यक्रमों को कॉन्ग्रेस ने अपने अभियान में शामिल कर लिया।
- हरिजन उत्थान एवं अस्पृश्यता उन्मूलन की दिशा में कॉन्ग्रेस एवं गांधीजी के कार्य आज भी प्रासंगिक एवं उल्लेखनीय हैं।

सामाजिक सुधार संबंधी प्रमुख अधिनियम

अधिनियम	संबंधित विषय	गवर्नर जनरल
सती-प्रथा निषेध (1829 ई.)	सती-प्रथा पर पूर्ण प्रतिबंध	लार्ड वि. बेंटिक
दास-प्रथा (1843 ई.)	दास-प्रथा पर पूर्ण प्रतिबंध	लार्ड एलनबरो
विधवा-पुनर्विवाह (1856 ई.)	विधवा पुनर्विवाह को अनुमति प्रदान की गई	लार्ड कैनिंग
नेटिव मैरेज एक्ट (1872 ई.)	बहुपत्नी प्रथा पर प्रतिबंध, बाल विवाह का विरोध	लार्ड नार्थब्रुक
एज ऑफ कंसेंट एक्ट (1891 ई.)	लडकियों हेतु विवाह की आयु 12 वर्ष निर्धारित	लार्ड लैंसडाउन
शारदा अधिनियम (1930 ई.)	लडकियों हेतु विवाह की आयु 14 वर्ष निर्धारित	लार्ड इरविन
हिंदू महिला संपत्ति अधिनियम (1937 ई.)	हिंदू महिलाओं को संपत्ति का अधिकार	लार्ड लिनलिथगो

❑❑❑